: अध्याय चार :

मोहन राकेश के नाटकों के नारी-पात्र --

प्रयोगधर्मा नाटककार मोहन राकेश ने देश, समाज और आदर्शों के बीच दबे व्यक्तित्व को पहली बार ऊपर उठाया । आधुनिक परिवेश की सतह के नीचे व्यक्ति विस्तृत होता जा रहा है, साथ-ही-साथ उसमें लघुता की हीन भावना भी बल पकड़ रही है, आंतर तथा बाह्य संघर्ष की पीडा उसे कचोट रही है, आदि बातों को राकेश ने सही ढंग से पहचाना और स्वानुभूति के आधार पर उन्हें अपने साहित्य में खडा किया । राकेश ने अपने जीवन के आरंभिक काल से जिस अकेलेपन को महसूस किया, जिस अधूरेपन को भोगा और जीवन की शून्यता का जो अहसास किया , उन सब को उन्होंने अपने नाटकों में प्रामाणिक अभिव्यक्ति दी है । राकेश ने अपने चारों नाटकों `आषाढ का एक दिन` , `लहरों के राजहंस`, `आधे-अधूरे`, `पैर तले की जमीन` - में नारी का सभी अंगों से चित्रण किया है । मोहन राकेश के नाटकों के नारी पात्रों में अपनी मनोग्रंथियों के शिकंजे से उबरने की छटपटाहट दिखाई देती हैं । आधुनिक नारी का अनिश्चय बोध स्वाभाविक रुप से परिलक्षित होता है । मोहन राकेश के नाटकों में कहीं कहीं खंडित विश्वास वाले नारी - पात्र भी दिखाई देते हैं, जो कभी-कभी खुद को भी तोड लेते हैं । कहीं कहीं पर राकेश की नारी परंपरागत नारीत्व की दृष्टि से अविश्वसनीय भी लगती है । यहाँ मोहन राकेश के नाटकों के नारी पात्रों का प्राय: सभी अंगों से अध्ययन करने का तथा उनके एकांकी साहित्य के नारी पात्रों का संक्षेप में विवरण देने का प्रयास किया जा रहा है ।

आषाढ का एक दिन --

अस्तित्व-अनस्तित्व का संघर्ष, भावना और यथार्थ का संघर्ष, नारी का दोहरा व्यक्तित्व, प्रेम और कर्तव्य के बीच नारी की दयनीय स्थिति ,कलाकार की सृजनात्मक प्रतिभा की समस्या, राज्याश्रय और साहित्यकार की प्रतिभा,पुरुष के अहं की शिकार बनी नारी, एक को तन और दूसरे को मन देकर दो परस्पर विरोधी परिस्थितियों के बीच छटपटाती नारी, आधुनिक शोधकर्ताओं की स्थिति

प्रशासन के कर्मचारियों की अकर्मण्यता, वर्तमान शासकीय समस्याएँ आदि बातों पर आधारित मोहन राकेश के सबसे प्रसिध्द नाटक 'आषाढ का एक दिन' के मल्लिका, अम्बिका, प्रियंगुमंजरी, रंगिणी-संगिनी आदि प्रमुख नारी पात्र हैं।

मल्लिका --

'आषाढ का एक दिन' नाटक का केन्द्र तथा नाटक की नायिका मल्लिका है, लेखक ने इस नाटक में मल्लिका का भावभीना चरित्र अंकित किया है। मल्लिका, कालिदास की बालसखी और उसके काव्य की मूल प्रेरणा शक्ति भी है। उसके सम्बन्ध में ग्राम-प्रांतर में अनेक अपवाद भी फैले हुए है, परंतु सभी अपवादों को ठुकराकर वह कालिदास के साथ पर्वत - शृंखलाओं पर स्वच्छंद रुप से घूमती है और उमडते-घुमडते मेघों का निर्व्याज सौंदर्य जी भर करपी लेती है। मल्लिकाने भावना में भावना का वरण किया है, इसलिए वह कालिदास से नि:स्वार्थ प्रेम करती है, लेकिन उसने प्रेम के बदले में कालिदास से किसी भी प्रकार के प्रतिदान की कभी अपेक्षा नहीं की है। इसलिए वह दर्शक के मन-मस्तिष्क पर पूर्ण रुप से छा जाती है।

'कथा मूलत: कालिदास की प्रेयसी मल्लिका पर केंद्रित है - एक ऐसी समर्पिता नारी जो उपेक्षित कवि से प्रेम ही नहीं करती, अपितु उसे महान बनते हुए भी देखना चाहती है। महानता के इस विशाल भवन का निर्माण मल्लिका के जीवन का मूल्य पाकर होता है।'[१]

आषाढ की धारासार वर्षा में अपने प्रिय के साथ भीगकर गीले वस्त्रों में काँपती, सिमटती, ठिठकती मल्लिका नाटक के प्रारम्भ में प्रवेश करती हुई हमारे सामने आती है। प्रेमरस में अन्तरबाह्य स्नात मल्लिका माँ से कहती है, 'आषाढ का पहला दिन और ऐसी वर्षा माँ। ... ऐसी धारासार वर्षा। दूर-दूर की उपत्यकाएँ भीग गई। ... और मैं भी तो। देखो न माँ, कैसी भीग गई हूँ।'[२] इस तरह एक अल्हड, भोलीभाली, भावुक, आकर्षक, संवेदनशील और सुन्दर युवती के

---

१ स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी नाटक मोहन राकेश के विशेष संदर्भ में - -- डॉ. रीता कुमार - पृ.२९३-९४

२ आषाढ का एक दिन - मोहन राकेश पृ.६

रुप में मल्लिका हमारे सामने आती है । निसर्ग की गोदी में पली मल्लिका, सृष्टि के अनुपम सौन्दर्य का आस्वादन कर निश्छल बनी हुई है । निसर्ग का अनुपम सौन्दर्य उसमें समाया हुआ है, इसलिए तो वह कालिदास के काव्य की मूल प्रेरणा बन सकी । आषाढ के पहले दिन के अवसर पर प्रकृति के मदमस्त वातावरण में मल्लिका बरसात में भींगकर उल्हसित मन से घर आती है । लेखक ने मल्लिका का जो काव्यमय वर्णन किया है, वह निसर्ग के साथ साथ मल्लिका के उल्लसित मन का भी परिचय देता है । मल्लिका कालिदास के साथ घूमकर स्वर्गसुख का अनुभव करती है । अवर्णनीय सृष्टि सौन्दर्य और कालिदास की सृजन शक्ति का अनोखा और रम्य संगम मल्लिका के रसिक अंतर्मन को प्रभावित करता है ।

कालिदास की अनन्य प्रेमिका मल्लिका समाज की पर्वाह किए बिना कालिदास से प्रेम करती है । उसका प्रेम नि:स्वार्थी और अशरीरी है । और वह अपने स्वस्थ भविष्य के लिए भी अपने प्रेम का प्रयोग करना नहीं चाहती । मल्लिका में प्रेम का उदात्त और त्यागमय रुप पाया जाता है । मल्लिका में नारी हृदय की कोमलता और बिनाशर्त उत्सर्ग की भावना अपने परिपूर्ण रुप में दिखाई देती है । आत्मोत्सर्गशील मल्लिका कालिदास की आस्था का स्थूल और विस्तारित रुप है । 'कुमार सम्भव' की तपस्विनी 'उमा', 'मेघदूत' की विरह विमर्दिता 'यक्षिणी' और 'अभिज्ञान शाकुन्तलम' की 'शकुन्तला' आदि मल्लिका के प्रतिरुप ही है ।

मल्लिका ने भावना में एक भावना का वरण किया है । वह प्रेम भावना का साकार रुप है । वह कालिदास के साथ बने सम्बन्धों को सब सम्बन्धों से बडा मानती है । 'मेरे लिए यह सम्बन्ध और सब सम्बन्धों से बडा है । मैं वास्तव में अपनी भावना से प्रेम करती हूँ जो पवित्र है, कोमल है, अनश्वर है ....।'[१] जीवन की स्थूल आवश्यकताओं को अपनी प्रेम भावना के आगे वह कुछ भी महत्व नहीं देती है । वह अशरीरी प्रेम की उपासिका है । वह माँ से कहती है, 'जीवन की स्थूल

---

१ आषाढ का एक दिन - मोहन राकेश - पृ.१३

आवश्यकताएँ ही तो सब कुछ नहीं है, माँ । उनके अतिरिक्त भी तो बहुत कुछ है ।[१] अपना भविष्य, दुनिया की हरकतें, माँ के अनुभव आदि के प्रति वह अनजान है । प्रेम, मोह, भावना, शुभकामनाएँ, सरलता आदि सब कुछ वह कालिदास को अर्पण कर देती है । वह एक आस्था मात्र है । मातुल उसे सारे प्रदेश में सुशील, सबसे विनीत और सबसे भोली लडकी बताता है । विलोम भी मल्लिका को लोभ और जीवन के सम्बन्ध में अबोध और भोली ठहराता है । परन्तु अम्बिका को मल्लिका के भोलेपन का और सरल जज्बात का सबसे बडा दु:ख है । निश्चय पूर्ण आत्म-समर्पण ही मल्लिका का दूसरा नाम है।[२]

मल्लिका अपने व्यक्तित्व के प्रति पूर्णरुप से सजग और सचेत है । उसने कालिदास के प्रति जो आत्मसमर्पण किया है, वह सोचसमझकर किया है । यहाँ राकेश को अभिप्रेत आधुनिक स्वतन्त्रचेता, सजग नारी का चित्र स्पष्ट होता है । 'क्या अधिकार है उन्हें कुछ भी कहने का ? मल्लिका का जीवन उसकी अपनी सम्पत्ति है । वह उसे नष्ट करना चाहती है, तो किसी को उसपर आलोचना करने का क्या अधिकार है[३] ?' अपने ही भावनिक, आत्मिक, संवेदनशील विश्व में में मल्लिका पूर्णरुप से डूब गई है ।

कालिदास को उज्जयिनी के राजकवि का सम्मान मिलनेवाला है, यह सुनकर मल्लिका हर्षभरित हो जाती है । वह माँ से कहती है, कि कालिदास के प्रति मेरी भावना निराधार नहीं है, वे एक असाधारण कवि हैं । माँ के अनुरोध करने पर भी वह विवाह के लिए कालिदास से कुछ पूछती नहीं । वह कहती है, 'आज जब उनका जीवन एक नई दिशा ग्रहण कर रहा है, मैं उनके सामने अपने स्वार्थ की घोषणा नहीं करना चाहती[४] ।' मल्लिका कालिदास को उज्जयिनी जाने के लिए प्रवृत्त करना चाहती है । वह कहती है, ' नई भूमि तुम्हें यहाँ से अधिक

---

१ आषाढ का एक दिन - मोहन राकेश - पृ. 9

२ मोहन राकेश का नाट्य साहित्य - डॉ. पुष्पा बंसल पृ. १५

३ आषाढ का एक दिन - मोहन राकेश । पृ. १२

४ - वही - पृ. २५

संपन्न और उर्वरा मिलेगी इस भूमि से तुम जो कुछ ग्रहण कर सकते थे कर चुके हो। तुम्हें आज नई भूमि की आवश्यकता है जो तुम्हारे व्यक्तित्व को अधिक पूर्ण बना दे।[१]' अपने अंतस् की रिक्तता को, कसमसाहट को सहकर भी वह हृदय से कालिदास को उज्जयिनी जाने के लिए प्रेरित करती है। इतना बडा त्याग मल्लिका को बहुत ऊँचा उठाता है। यहाँ मल्लिका में प्राचीन भारतीय नारी का आदर्श रूप दिखाई देता है। वैसे तो राकेश मूलत: भारतीय मिट्टी से सम्बद्ध रहे है।

कालिदास उज्जयिनी चला जाता है, परंतु बहुत दिनों तक उसका कोई समाचार नहीं मिलता है। फिर भी मल्लिका सन्तोष प्रकट करती है, ' मुझे प्रसन्नता है कि वे वहाँ जाकर इतने व्यस्त है[२]।' फिर जब वह निरोप व्दारा यह सुनती है कि उज्जयिनी में कालिदास के सम्बन्ध में बहुत सारे अपवाद फैले हुए है, तो वह विश्वास के साथ कहती है कि,' व्यक्ति उन्नत्ति करता है, तो उसके नाम के साथ कई तरह के अपवाद जुडने लगते हैं[३]।' प्रियंगुमंजरी के साथ कालिदास के विवाह कीबात जब वह सुनती है, तब वह अपने मन में मसोसकर रह जाती है और कहती है,' तो इसमें बुरा क्या है। ... उन्हें जीवन में असाधारण का ही साथ चाहिए था[४]।' कालिदास के ग्राम-प्रान्तर में आने की खबर मिलते ही वह आत्मचिन्तन और भावनाओं में डूब जाती है, परन्तु उसकी सारी आकांक्षाएँ मनमें ही रह जाती है, कालिदास में यथार्थ का सामना करने का ढाढस नहीं है। प्रियंगुमंजरी मल्लिका के सामने कुछ प्रास्ताव रखती है परन्तु स्वाभिमानी मल्लिका उसकी मदद के प्रियंगु के सारे प्रस्तावों को ठुकरा देती है। जब प्रियंगुमंजरी मल्लिका के सामने किसी भी राज्याधिकारी के साथ विवाह करने का प्रस्ताव रखती है, तब उसके मन को भारी ठेस पहुँचती है। मल्लिका परिस्थिति से दीन है अवश्य, परन्तु मन से हीन बिल्कुल नहीं है। वह किसी भी परिस्थिति में अपने अंतस् की भावना - त्मक स्थिरता कायम रखना चाहती है। वह अपनी भावनिक दृढता का मोल वस्तुओं

१	आषाढ का एक दिन - मोहन राकेश	पृ.४५
२	- वही -	पृ.५१
३	- वही -	पृ.५१
४	- वही -	पृ.५१-५२

में करना नहीं चाहती । उन्होंने कभी भी अपने अंतस् से भावनात्मक कोष्ठ को रिक्त नहीं होने दिया है ।

मल्लिका के अन्तस् में सदैव कालिदास ही छाया हुआ रहता है ।' मैं यद्यपि तुम्हारे जीवन में नहीं रही, परन्तु तुम मेरे जीवन में सदा बने रहे हो । मैं ने कभी तुम्हें अपने से दूर नहीं होने दिया । तुम रचना करते रहे, और मैं समझाती रही, कि मैं सार्थक हूँ, मेरे जीवन की भी कुछ उपलब्धि है[१]।' यहाँ मल्लिका का के मानस की भावनात्मक संलग्नता दृष्टिगोचर होती है । और अपने जीवन के लक्ष्य के प्रति एवं अपने निर्णय के प्रति अडिग रहने की वृत्ति स्पष्ट रुप से दिखाई देती है ।' मल्लिका राकेश की आकांक्षा है, केवल कल्पना नहीं, एक ऐसा नारी रुप जो रचनाकार के लिए प्रेरक हो, उसकी रचनात्मक शक्ति का विस्तार करने में सहायक हो, कहीं बाधक न बनता हो[२]।' उसने खुद को कालिदास से कभी अलग समझा ही नहीं, तो उससे वैयक्तिक स्वार्थ की क्या अपेक्षा रखेगी ? कालिदास के बनने में, उसकी उन्नति में वह अपनी सार्थकता समझती थी । कालिदास संन्यास लेकर काशी चला गया, यह समाचार वह सुनती है, लेकिन इस तरह जीवन से भागकर कालिदास का पलायन उसे मान्य नहीं है । अम्बिका की हरदम की सलाह, विलोम की कटूक्तियाँ, प्रियंगु के प्रस्ताव, व्यापारियों से कालिदास के सम्बन्ध में सुनी अनचाही बातें, स्वयं कालिदास का ग्राम प्रान्तर में आकर मल्लिका से न मिलना आदि सारी बातों से भी मल्लिका हारती नहीं, उसका विश्वास हिलता नहीं, लेकिन कालिदास के संन्यास लेने की बात सुनकर वह मन में व्याकुल हो उठती है, तिलमिला उठती है । कालिदास के जीवन की कुछ उपलब्धि हो, वह कुछ बने इसलिए उसने खुद को मिटा दिया था।' नहीं, तुम काशी नहीं गए । तुमने संन्यास नहीं लिया । मैं ने इसलिए तुमसे यहाँ से जाने के लिए नहीं कहा था ।.. ... मैं ने इसलिए भी नहीं कहा था कि तुम जाकर कहीं का शासन-भार संभालो । फिर भी जब तुमने ऐसा किया, मैं ने तुम्हें शुभकामनाएँ दी - यद्यपि प्रत्यक्ष तुमने

---

१ आषाढ का एक दिन - मोहन राकेश - पृ.९३

२ मोहन राकेश और उनके नाटक - गिरीश रस्तोगी - पृ.७२

वे शुभकामनाएँ ग्रहण नहीं की। मैं यद्यपि तुम्हारे जीवन में नहीं रही, परन्तु तुम मेरे जीवन में सदा बने रहे हो। मैं ने कभी तुम्हें अपने से दूर नहीं होने दिया। तुम रचना करते रहे, और मैं समझाती रही, कि मैं सार्थक हूँ, मेरे जीवन की भी कुछ उपलब्धि है। और आज तुम मेरे जीवन को इस तरह निरर्थक कर दोगे ?[१] इसमें मल्लिका की व्याकुलता, आकुलता और मन की आगतिक पुकार दृग्गोचर होती है। मल्लिका बाहर से तो टूट चुकी है, लेकिन अन्दर से सदा के लिए कालिदास से जुडी रहती है।[२] वस्तुत: कालिदास और मल्लिका का यह प्रेमभाव उन धारणाओं को ही रेखांकित करता है जो नीत्से, बाल्बाक, बायरन आदि व्यक्त कर चुके हैं, कि प्रेम स्त्री का सम्पूर्ण अस्तित्व है, और पुरुष के लिए एक आवश्यकता मात्र है। पुरुष की जिन्दगी प्रसिध्दि है और स्त्री का प्रेम। पुरुष का प्रेम और उसका जीवन दो अलग वस्तुएँ है, स्त्री के लिए प्रेम एक आस्था है।[३]

मल्लिका का यह आदर्श व्यक्तित्व विलोम से विवाह कर एक नया मार्ग अपनाता है। हमारी दृष्टि से मल्लिका विलोम से ब्याहकर अपने जीवन को प्रामाणिकता - ऑथेन्टिसिटी प्रदान करती है। वह अपनी स्वतन्त्रता का उपयोग करती है। वह उस असत् आस्था का विरोध है, जो आत्मबलिदान में ही नारी की परम सिध्दि मानता है।[४] आधुनिक नारी के जिए जाने वाले जीवन की यह एक अनिवार्यता है तथा प्राप्त परिस्थिति से आधुनिक नारी का यह एक समझौता है। मल्लिका-अर्थात् नारी मात्र भावना का बोझ ढोकर भोग्या नहीं बनी रहना चाहती, वह उसके अन्तस् की घृणा का विस्फोट है और साधन-हीनता से छुटकारा पाने के लिए आगत की स्वीकृति उसके प्रेम की प्रतिक्रिया। इस प्रकार उसका जीवन विसंगतियों में भी एक नितान्त अनिवार्यता या संगति का अहसास करा देता है।[५]

कालिदास के जीवन से दूर रहकर भी मल्लिका अपने आपको समीप पाती थी, वह कालिदास की उपलब्धियों को अपनी उपलब्धि समझाती थी। भावना के स्तर

---

१ आषाढ का एक दिन - मोहन राकेश पृ.९२-९३
२ आधुनिक नाटक का मसीहा - मोहन राकेश - डॉ.गोविंद चातक पृ.४७
३ - वही - पृ.४९
४ अपने नाटकों के दायरे में मोहन राकेश - तिलकराज शर्मा पृ.६४

पर अद्वैत हमेशा के लिए बना ही रहा था,' मैं टूटकर भी अनुभव करती रही कि तुम बन रहे हो । क्योंकि मैं अपने को अपने में न देखकर तुममें देखती थी ।'[१] मल्लिका का यह समर्पण, एकरूपता की भावना अनोखी, अतुलनीय है ।

जिन्दगी के उत्तरार्ध्द में जब कालिदास टूटकर - हारकर वापस लौटता है, तब सभी ओर परिवर्तन महसूस करता है, जिसका जिम्मेदार कालिदास ही है । अंत में कालिदास कहता है, 'मैं ने कहा था, मैं अथ से आरम्भ करना चाहता हूँ । यह सम्भवत: इच्छा का समय के साथ व्दन्व्द था। परंतु देख रहा हूँ कि समय अधिक शक्तिशाली है[२]।' क्योंकि समय किसी की प्रतीक्षा नहीं करता । अत: कालिदास मल्लिका को सदा के लिए अकेली छोडकर वहाँ से चला जाता है । मल्लिका के पास मात्र भावना की चिरिक्तता स्थायी रुप में रह जाती है । मल्लिका 'टूटी भावना और जुडे वर्तमान' को लेकर रह जाती है । नारी के तन और मन का यह विभाजन यथार्थ को स्वीकार्य नहीं है । खुद टूट कर, मिटकर किसी के बनने में जीवन की इतिश्री माननेवाली मल्लिका आखिर क्या पाती है ? कालिदास को ढूँढने के लिए बाहर जानेवाली मल्लिका अपनी बाहों में बच्ची को देख कर वहीं ठिठक जाती है । क्या यह नई स्थिति की स्वीकृति है ? केवल भावना के सहारे स्त्री जीवन जी सकती है ? यहाँ यह दिखाई देता है, कि जीवन का कटु यथार्थ मल्लिका को अम्बिका बना डालता है । इस प्रकार यह स्पष्ट होता है, कि नारी का प्रेमिका रुप अन्त में जीवन के यथार्थ की ओर मुडता है और यह समय की अनिवार्यता है । इस प्रकार 'आषाढ का एक दिन' नाटक का आरम्भ मल्लिका से होता है और अन्त भी उसी से होता है ।

मल्लिका आधुनिक परिवेश में समस्याओं से जुझनेवाली पीडित नारी का प्रतीक है । आधुनिक युग का रोमांस और यथार्थ मल्लिका में प्रकट हुआ है, तो अम्बिका पुरानी परम्पराओं की प्रतीक है । दोनों में नए-पुराने का संघर्ष है ।

---

१ आषाढ का एक दिन - मोहन राकेश पृ.९४

२ - वही - पृ.११०

पुराने में जीवन को स्थिरता, एकरसता मिले इसका आग्रह रहता है, तो नए में एक प्रकार का चैलेंज स्वीकार किया जाता है। मानो मल्लिका अपने जीवन को एक दाँव पर लगा लेती है, चाहे जीते या हारे।

जहाँ मल्लिका का आत्मसमर्पण बिना शर्त है और कालिदास से प्रेम सम्बन्ध उसका सम्पूर्ण अस्तित्व है, वह एक आदर्श भारतीय नारी के रुप में हमारे सामने आती है। परन्तु विलोम से शादी कर वह एक नया रुप धारण करती है, यहाँ वह यथार्थ की भूमि पर चलने लगती है। परन्तु कुछ आलोचकों को मल्लिका का यह नया रूप खलता रहा है, ' भाव के कोष्ठ को रिक्त न होने देकर अभाव के कोष्ठ में न जाने कितनी कितनी दूसरी आकृतियों को प्रवेश करने देना और उन्हीं में से किसी एक की सन्तान को अभाव की सन्तान के रुप में जन्म देना असभव्य चरित्र की संगति में नहीं जिसका साक्षात्कार नाटक के प्रारम्भ में होता है[१]।'

अस्तित्व, अनस्तित्व के झमेले में फँसी मल्लिका में सम-विषम दोनों प्रकार की अनुभूतियों का योग है। उसके एक अंश पर कालिदास का, तो दूसरे अंश पर विलोम का अधिकार है। इस प्रकार मल्लिका दोनों के बीच जीती है। वह प्रेयसी और पत्नी दोनों भी है, परन्तु मल्लिका के पूरे अंश पर न कालिदास का अधिकार है और न विलोम का। अक्सर वह पूर्ण रुप से कालिदास की होकर रह सक्ती थी, परन्तु ऐसा न होने का कारण एक तो खुद कालिदास है और शायद उससे भी बडा कारण मल्लिका की माँ (अम्बिका) है। अम्बिका कालिदास और मल्लिका के प्रेम सम्बन्ध को आत्म-प्रवंचना मानती थी। और सम्भव यह है कि अम्बिका का यह भाव मल्लिका के अवचेतन में बस जाता है, परिणामत: कालिदास से मुक्त होने के लिए मल्लिका विलोम से बन्ध जाती है। वह कालिदास से प्रवंचित हो जाती है और कालान्तर में अम्बिका बन जाती है। अत: अपने अवचेतन में स्थित माँ के बिम्ब के कारण वह कालिदास और स्वयं को दण्डित

---

१ मोहन राकेश की रंग - सृष्टि - डॉ. जगदीश शर्मा - पृ.२६

करने के लिए विलोम से विवाह कर लेती है । यहाँ मल्लिका में आत्मपीडक और परपीडक दोनों प्रवृत्तियाँ दृष्टिगोचर होती हैं । ग्राम-प्रान्तर में जब नई आकृतियाँ दिखाई देने लगती है, तब मल्लिका डर के कारण सिहर जाती है और कहती है,` वैसी आकृतियाँ ? .... जानते है, माँ इस सम्बन्ध में क्या कहती है ? कहती है, कि जब भी ये आकृतियाँ दिखाई देती है, कोई-न-कोई अनिष्ट होता है । कभी युध्द, कभी महामारी । ...[१]` और अब क्या होगा ? इस डर से मल्लिका आशंकित है । बचपन में अवचेतन में बसा हुआ डर इस प्रकार मल्लिका के जीवन पर छा जाता है और अवसर मिलते ही उभर कर सामने आता है । इससे यह स्पष्ट होता है, कि आदमी के अवचेतन में बचपन में जो संस्कार स्थित होते हैं, वे जिन्दगीभर वैसे ही बने रहते हैं और अवसर मिलते ही उभर कर आदमी के वर्तमान जीवन को प्रभावित करते हैं । इस प्रकार दो पुरुषों के बीच जीनेवाली मल्लिका में प्रेम और घृणा, आत्मदान और आत्म-आग्रह, समर्पण और विद्रोह का अद्भुत समन्वय है ।

इस नाटक में मल्लिका जितनी अधिक पीडित हुई है , हमारी सहानुभूति भी उसकी ओर उतनी ही तीव्रता से उमड पडती है । मल्लिका तो नाटक में बार-बार आहत होती ही है, लेकिन उसके साथ साथ हम भी आहत होते हैं; यह लेखक की चरित्र सृष्टि की सफलता है । लेकिन एक त्यागमूर्ती नारी का यथार्थ आखिर इतनी कडुवाहट लिए होगा, यह मन स्वीकार नहीं करता । इतना रुखा और विपरीत यथार्थ हमारे मन में विफलता की भावना का निर्माण करता है । ` मल्लिका को यातनाएँ सहते हुए भी एकनिष्ठ प्रेमिका के रुप में प्रस्तुत करना नाटककार का सराहनीय कार्य है, परन्तु अन्त में उसे एक वारांगना के रुप में मोड देना, पाठक और दर्शक के मन मेंहलचल पैदा कर देता है[२]।` मल्लिका का इतना बडा त्याग, जिन्दगीभर की अटूट भावुकता, उसके दुर्बल समझौते के साथ मेल नहीं खाती । मल्लिका की कारुणिक परिणति देखकर आलोचकों व्दारा राकेश पर आरोप किए गए हैं, कि उन्होंने नारी का पतन जानबूझकर दिखाया

१आषाढ का एक दिन - मोहन राकेश - पृ.५३

२ मोहन राकेश के नाटक - डॉ. व्दिजराम यादव - पृ.५५

है ।` मल्लिका का नारी के रुप में सर्वथा एकांगी, रुमानी और व्यापक अर्थ में सामाजिक दृष्टि से हीन व्यक्तित्व उभारा गया है[१]।` नारी की असीम भाव - नाओं का इस प्रकार पतन दिखाने का उद्देश्य उसकी खिल्ली उडाना या नारी को मात्र वासनामय दिखाना ही है । अत: मल्लिका का आखिरी यथार्थ इस प्रकार सहज स्वीकार्य नहीं लगता । इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि नारी को केवल परिस्थिति के हाथों का खिलौना बनना पडा है । नारी अपने व्यक्तित्व की उत्तम हैसियत नहीं बना पाती, तो प्रेमचंद कालीन आदर्शों के अनुसार केवल मिटते रहना ही उसकी नियति है ।` हो सकता है कि राकेश भावना के सम्बन्ध को शरीर के सम्बन्ध से अलग रखने के पक्ष में हो और इस आधार पर मल्लिका व्दारा वारांगना का जीवन अपनाए जाने को,` भावना में भावना के वरण` से विसंगत न समझते हो, लेकिन तन और मन के सम्बन्ध को इस सीमा तक अलग नहीं किया जा सकता[२]।`

वर्तमान जीवन का कटु यथार्थ यह भी है, कि नारी दिलसे चाहती किसी एक को तो उसे परिस्थिति के वश में आकर, सामाजिक बन्धनों में बन्धकर, रुढ्यिों में फँसकर शादी किसी दूसरे से करने के लिए बाध्य होना पडता है । और नारी एक ` विशेषण` बन कर जीवन जीती है । आज के नारी समाज की ज्वलन्त समस्या उठाने में मल्लिका पूर्णत: सफल रही है । समाज आज अपने आधुनिक रुप का नारा बडे जोर शोर से लगा रहा है । बन्धनों में जकडी नारी की जन्जीरों को तोडने की झनझनाहट तो आसमान तक गूंजती सुनाई पडती है, लेकिन प्रत्यक्ष में अभी तक जन्जीर टूटी नहीं है । जन्जीर को मात्र जरासा खींच कर खरोंचा गया है , बस ।

नारी जीवन में प्रेम और विवाह की समस्या सर्वोपरि है । राकेश ने इसी नाजुक पहलू को नाटक में उठाया है । युवतियाँ प्रेम तो करती है, लेकिन प्रेम की परिणति विवाह में ही होगी, इसकी कोई अनिवार्यता नहीं है । विवाह का प्रश्न उठते ही जाँत-पाँत, धर्म, ऊँच-नीच, वर्ग-बिरादरी, साम्पत्तिकस्थिति, शिक्षा,

---

१ नाटककार मोहन राकेश - डॉ.जीवन प्रकाश जोशी - पृ.५३

२ मोहन राकेश की रंग सृष्टि - जगदीश शर्मा - पृ.२६

माँ-बाप की स्वीकृति आदि अनेक समस्याएँ खड़ी होती है। हमारा समाज जीवनभर केवलप्रेम करते रहने का अभ्यस्त नहीं है। कालिदास का आचरण आज के भारतीय नव युवकों जैसा ही दिखाया गया है। अपने कैरियर के लिए वह अपने प्रेम की भी बलि देता है। पुरुष की अवसरवादिता का प्रत्यक्ष उदाहरण कालिदास है। पुरुष कुछ एक निष्ठ नहीं रह सकता। वह शादी एक से करता है, प्रेम दूसरे से, तो सम्बन्ध अनेकों से रखता है और फिर भी अपनी प्रेमिका से एकनिष्ठता की माँग कर के नए सिरे से जीना चाहता है। जहाँ एक पुरुष विभिन्न नारियों से यौन-सम्बन्ध स्थापित करने के बाद भी साफ परक और विवाह करने योग्य रहता है, वहीं एक नारी जो परिस्थितियों की भँवर में पड़कर नीचे गिर जाती है, उसे उठाने (स्वीकार करने) का साहस आधुनिक पुरुष में नहीं है। मल्लिका जो प्रतीक रूप में आज के नारी समाज का प्रतिनिधित्व करती है, उसका ज्वलन्त उदाहरण है।[१] आज समाज में आधुनिकता के नाम पर नारी को क्या मिल रहा है ? उसके लिए प्रेम की समस्या है, क्योंकि प्रेम का लालच दिखाकर समाज उससे छीना-झपटी करने को तो तैयार है ही। साथ-ही-साथ उसके विवाह की भी समस्या है, क्योंकि वह समाज में पतिता कहलाती है और अभाव की जिन्दगी तो उसकी सबसे बड़ी समस्या है ही, क्योंकि समाज उसे चैन से रहने नहीं देता है। इस प्रकार नारी घर बाहर, समस्याओं से घिरी हुई है।

'मल्लिका का चरित्र एक प्रेयसी और प्रेरणा का ही नहीं, भूमि में रोपित उस स्थिर आस्था का भी है जो ऊपर से झुलस कर भी मूल में विरोपित नहीं होती[२]।' राकेश की यह आस्था, परम्परा, आधुनिकता बोध और भविष्य की कामना से ही उद्भूत होती दिखाई देती है।

मल्लिका का कालिदास के प्रति आत्मसमर्पण अप्रतिम है, परन्तु आखिर वह टूट जाती है और जाते जाते निराशा का एक स्वर पीछे छोड़ जाती है। मल्लिका के व्यक्तित्व में शुरु में जो असीम निष्ठा दिखाई देती है, वह अन्त में परिस्थिति के

---

१ मोहन राकेश के नाटक - डॉ. त्रिजराम यादव - पृ.५६

२ लहरों के राजहंस - मोहन राकेश - भूमिका पृ.९

हाथों शारीरिक तौरपर आहत हुई जान पडती है। फिर भी वह थी कालिदास की आन्तर्वेदना, आन्तरवेदना जिसका नाम था मल्लिका। मल्लिका जो कि अपने प्रेयसी-गरिमा में मौन, असहनीय वेदना में सहनशील, उस धूप-शलाका-सी थी, जो बस जलना ही जानती है, जलाना नहीं।[१] नारी के जीवन की सफलता पुरुष के अहं के आगे गर्दन झुकाकर केवल असीम भावना में भावना का वरण करने में ही नहीं है, क्योंकि इससे केवल झुकना ही उसके भाग्य में आता है और आखिर वह कहीं की भी नहीं रह जाती। अनेक नवीनतम प्रवृत्तियों का अनोखा संगम आज के आधुनिक समाज में पाया जाता है और पाश्चात्य सभ्यता का प्रभाव भी व्यापक रुप से रहा है। इस प्रकार के वातावरण में हमारे इर्द-गिर्द अनेक नारियाँ घुटन एवं विवशता का अनुभव कर रही है। आधुनिक युग में केवल भावना के स्तर पर जीना सम्भव नहीं है, तो भावना के साथ बौध्दिकता और यथार्थ का भी ख्याल रखा जाए, तो आधुनिक समाज में नारियाँ आगे बढ सकती हैं।

जिन्दगी में इतना कटु यथार्थ भोगने पर भी मल्लिका में सामाजिक विद्रोह की अकर्मण्यता क्यों है, यह सवाल पैदा होता है। झगडकर अपने ध्येय को हासिल करने की तमन्ना मल्लिका में बिल्कुल दिखाई नहीं देती है। मल्लिका केवल सहते रहकर समर्पित होना यही पुरानी नारी का आदर्श मात्र दोहराती है। 'पुरुष के स्वार्थी, परम्परावादी अवसरवादी स्वभाव संस्कार के खिलाफ नारी विद्रोह की अभिव्यक्ति होनी थी, जो यहाँ नहीं है। फलत: नाटक में एक तरह का एकांगीपन है, पुरुष वर्ग की पक्षधरता है, नारी वर्ग की हीनता है।[२] पहले अंक में अपने व्यक्तिगत स्वातंत्र्य के प्रति मल्लिका में दिखाई देनेवाली सजगता आगे चल कर लुप्त हो जाती है। उसके अलौकिक समर्पण से मल्लिका आधुनिक नारी से कुछ ऊपर उठी दिखाई देती है। मल्लिका की प्रवंचना आधुनिक नारी की प्रवंचना है। लेकिन परिवर्तित समय के अनुसार अपने अधिकारों के प्रति नारी में क्रियाशील सजगता भी आवश्यक है, जो मल्लिका में नहीं दिखाई देती।

---

१ मोहन राकेश - साहित्यिक और सांस्कृतिक दृष्टि - वासु भट्टाचार्य की दृष्टिसे - पृ.११

२ नाटककार मोहन राकेश - डॉ.जीवन प्रकाश जोशी पृ.५२

कालिदास, मल्लिका और विलोम के पारस्परिक त्रिकोणात्मक सम्बन्ध कुछ ज्वलन्त प्रश्न उपस्थित करते हैं -- तन और मन को विभाजित कर, तन को अनेकसे और मन को मात्र एक से जोडकर नारी अपने जीवन में सार्थकता प्राप्त कर सकती है ? प्रेम बिना विवाह योग्य है ? विवाह के बिना प्रेम का निर्वाह कहाँ तक उचित है आदि । लगता है, कि राकेश ने मल्लिका के आड में भारतीय नारी के उन संस्कारों की ओर इशारा किया है , जो नारी को 'वरण' और 'निर्णय' के क्षणों में कमजोर कर देते हैं । इससे यह स्पष्ट होता है कि ऊपर से आधुनिकता का लिबास ओढनेवाली भारतीय नारी आखिर अन्दर से 'भारतीय नारी' ही रहती है, अर्थात् वही सीता, सावित्री, अनसूयावाली परम्परा ।

अम्बिका --

अम्बिका दूरदर्शी, अनुभवी माँ, करुणा की मूर्ति, ममता का सागर और यथार्थ को परखनेवाली आदर्श भारतीय माँ के रुप में हमारे सामने प्रस्तुत हुई है, जिसका चरित्र नाटक में सबसे अधिक जीवन्त और विश्वसनीय लगता है तथा सबसे अधिक प्रभावशाली है। वह विधवा है । उसकी इकलौती सन्तान है मल्लिका । मल्लिका के सिवा उसका दूसरा कोई भी सहारा नहीं है । नाटक के आरंभ में परिस्थितियों से प्रताडित अम्बिका हमारे सामने आती है, वह मल्लिका की माँ है । उसका चरित्र वैधव्य की गरिमा तथा ममतामयी माँ के गुणों से परिपूर्ण है । अम्बिका जीवन के कटु यथार्थ से पूरी तरह परिचित है, इसलिए उसका दृष्टिकोण पूर्ण रुप से यथार्थवादी बन गया है । मल्लिका से अत्यधिक स्नेह होने के कारण वह मल्लिका को भावनाओं के कल्पित लोक से मुक्त करने का बार बार प्रयास करती है ।

अम्बिका का चरित्र भारतीय आदर्श और यथार्थ माँ का चरित्र है । मल्लिका की माँ राकेश की अपनी माँ का प्रभाव लेकर अभिव्यक्त हुई है । अनिता के संस्मरण और राजेन्द्रपाल का लेख पढकर अम्बिका और राकेश की अपनी माँ के बिम्ब परस्पर घुलमिल जाते हैं । वे ममतामयी नारी थी, जिन्होंने

असमय वैधव्य को झेला था । मौन उनकी अदम्य शक्ति थी और अन्त:सलिला के समान प्रच्छन्न स्नेह, उनकी निधि । अम्बिका की मूल अवधारणा यही है । उसके मरते ही मल्लिका टूट जाती है, माँ के मरने पर राकेश भी कहीं बहुत गहरे में आहत हुए थे[१]।'

अम्बिका के जीवन में उसकी एकमात्र पुत्री मल्लिका ही उसका सर्वस्व है । अपनी पुत्री के लिए माँ की ममता पूरे आवेगों के साथ उमड पडी है । अम्बिका पुराने विचारों से प्रभावित है । अत: अपने यथार्थ के प्रति पैनी दृष्टि रखती है । उसका यथार्थ भरा आक्रोश उचित है, फिर भी वह मल्लिका व्दारा दुर्लक्षित किया जाता है ।मल्लिका की यौवनोचित स्वच्छन्दता अम्बिका को अपवादों के कारण खलती है ।मल्लिका का कालिदास के साथ स्वच्छंद घूमना और प्रकृति के प्रति अल्हडभाव अंबिका को चिन्तित कर देता है । ' ये दोनों प्रतिकूल बिम्ब उभारते हैं, पर सहसा बहुत भिन्न भी नहीं । मल्लिका युवती अंबिका को जीवन के थपेडों से ढली मल्लिका - एक आदि और दूसरा अंत । इसलिए जिन बरसते मेघों में भीगते हुए मल्लिका उमंगित होती है, उन्हीं की कल्पित विडम्बना पर अंबिका रो उठती है[२]।' मल्लिका और कालिदास के सम्बन्ध को लेकर समाज में अपवाद फैले हुए हैं । मल्लिका के चारित्र्य पर लोग नाक भौं सिकोडते हैं, पर अंबिका का मन उसे बर्दाश्त नहीं करता । क्योंकि अंबिका ने जीवन की धूप-छाँह को सहकर दिन काटे हैं । उसमें अनुभवों की परिपक्वता है । अत: वह कहती है,' इतना बडा अपवाद मुझसे नहीं सहा जाता है[३]।' यहाँ नारी का निष्कलंक चारित्र्य ही समाज में सर्वोपरि स्थान रखता है, यह दिखाया गया है ।माँ का मन अपनी लडकी के चारित्र्य पर उठी उँगलियाँ नहीं सह सकता । उसके लिए वह सबसे बडा अपवाद है । मल्लिका का कालिदास के प्रति लगाव को देखकर अंबिका अपनी बेबसी प्रकट करती है कि' आज तुम्हारा जीवन तुम्हारी सम्पत्ति है । मेरा तुम पर कोई अधिकार नहीं है ।' यहाँ अंबिका का अन्तर्द्वन्द्व स्पष्ट हुआ है ।' किसी को

---

१ आधुनिक नाटक का मसीहा - मोहन राकेश - डॉ.गोविंद चातक - पृ.३०-३१

२ - वही - पृ.४४

३ आषाढ का एक दिन - मोहन राकेश पृ.१२

४ - वही - पृ.१२

क्या अधिकार है कुछ कहने का ?' मल्लिका के इस सवाल पर परम्परावादी अंबिका का मन आहत हो जाता है। व्यक्ति स्वातंत्र्य की, विशेष कर लडकी के स्वातन्त्र्य की वह अभ्यस्त नहीं है। अत: उसका मन आक्रोश से भर उठता है। इस प्रकार के भावनात्मक आन्दोलनों के बावजूद भी वह मल्लिका के स्वास्थ्य के प्रति सतर्क है। मल्लिका के विवाह का प्रस्ताव विफल हो जाने से उसे भारी दु:ख होता है। मल्लिका का' भावना में भावना का वरण' उसे बिल्कुल पसंद नहीं है। क्योंकि उसे पूरी तरह से मालूम है, कि भावना कौनसी भी हो, परंतु जीना तो यथार्थ में ही पडता है। वह' भावना' को एक प्रकार का भुलावा मानती है।' तुम जिसे भावना कहती हो वह केवल छलना और आत्म प्रवन्चना है।[1]' केवल भावना जीवन की आवश्यकताओं को पूरा नहीं कर सकती। अंबिका जीवन की यथार्थ धरती पर मल्लिका को लाना चाहती है, लेकिन उसका मातृ-हृदय उसे उस कदर कठोर भी नहीं होने देता। यथार्थ और आकांक्षा का टकराव अंबिका और मल्लिका के बीच है। अंबिका भावना को केवल छलना और आत्मप्रवन्चना कहती है, क्योंकि ऐसी भावना को समाज में कोई ठोस आधार नहीं दिया जा सकता। वह यथार्थ पर विश्वास करती है, क्योंकि' मैं का जीवन भावना नहीं, कर्म है[2]।' उसे मल्लिका के भविष्य की चिन्ता है। अत: वह कहती है,' जब तुम्हारी मैं का शरीर नहीं रहेगा, और घर में एक समय के भोजन की व्यवस्था भी नहीं होगी, तो जो प्रश्न तुम्हारे सामने उपस्थित होगा, उसका तुम क्या उत्तर दोगी। तुम्हारी भावना उस प्रश्न का समाधान कर देगी[3]?' वास्तव में अंबिका दूरदर्शी है, इसलिए उसने मल्लिका के भविष्य के प्रति व्यक्त किया भय ही आखिर नाटक के अन्त में सत्य सिध्दहोता हुआ दिखाई देता है। और भावना जगत् में विचरण करनेवाली मल्लिका को जीवन की स्थूल आवश्यकताएँ ही वारांगना बनने के लिए बाध्य करती है। इस तरह मल्लिका के भविष्य के प्रति चिन्ता को अपने में समेटे हुए अंबिका इस जगत् से बिदा लेती है।

---

१ आषाढ का एक दिन - मोहन राकेश पृ.१३

२ - वही - पृ.१४

३ - वही - पृ.२४-२५

अम्बिका एक माँ के नाते मल्लिका को यह समझाना चाहती है, कि तुम्हारी आयु ही ऐसी है, जो भावना को सर्वश्रेष्ठ मान रही है, परंतु यथार्थ कठोर है, फिर भी सत्य है। मेरी यह अवस्था बीत चुकी है, जब यथार्थ से आँखें मूँद कर जिया जाता है। भविष्य की विपत्तियों के प्रति वह मल्लिका को सचेत करना चाहती है। भावना से हृदय की प्यास तो बुझती है, लेकिन पेट भरने के लिए कर्म की आवश्यकता होती है। अम्बिका ने उस यथार्थ का सही तर्क पहले से ही किया था, जिस ने मल्लिका को अन्त में बिखेर दिया। कालिदास जैसे कल्पनाजीवी, अस्थिर व्यक्ति के साथ मल्लिका की जीवन नौका सुख-समाधान से विहार न कर सकेगी यह अशुभ आहट उसके दिलने पहले से ही पा ली थी। अंबिका के जीवन विषयक दृष्टिकोण की व्यावहारिकता सराहनीय है। वह अपने परिवेश की पीडा से जुडी है और वह परिस्थितियों के बीच लय कर वर्तमान तक आई है, अत: उसमें अनुभवों की सघनता है। कालिदास आत्मकेन्द्रित व्यक्ति है, यह उसने पहचान लिया है, इसलिए वह कालिदास से घृणा करती है और उसे अनुदार दृष्टि से देखती है। कालिदास को अपने सिवा और किसी से मोह नहीं है। वह भावना की आड में प्रेम तो करना चाहता है, लेकिन विवाह करना नहीं चाहता। मल्लिका इसका कारण कालिदास का अभावग्रस्त जीवन बताती है, तो अंबिका कहती है, ` किसी सम्बन्ध से बचने के लिए अभाव जितना बडा कारण होता है, अभाव की पूर्ति उससे बडा कारण बन जाती है।`[१] इस प्रकार मल्लिका के विफल प्रेम जीवन की यह भविष्यवाणी है।

जीवन के मूल्य अनवरत परिवर्तित हो रहे हैं। प्रेम और आस्था जैसे आत्मीय सम्बन्ध भी परम्परागत या स्थिर नहीं रह सकते। आज का मानव उन सम्बन्धों से भी बचकर निकल जाना चाहता है। सम्बन्धों की यह कृत्रिमता अंबिका ने अपने अनुभव से परखी है। वह कहती है, ` मैं ऐसे व्यक्ति को अच्छी तरह समझती हूँ। तुम्हारे साथ उसका इतना ही सम्बन्ध है, कि तुम एक उपादान हो, जिसके आश्रय से वह अपने से प्रेम कर सकता है, अपने पर गर्व कर सकता है। परन्तु तुम क्या सजीव व्यक्ति नहीं हो ? तुम्हारे प्रति उसका या तुम्हारा कोई कर्तव्य नहीं है ?`[२]

---

१ आषाढ का एक दिन - मोहन राकेश - पृ.२४

२ - वही - पृ.२४

सम्बन्धों में आई सुविधा की माँग अंबिका पहचानती है। खुद राकेश भी इसी के समर्थक है, कि 'किसी दूसरे को उपादान के रुप में कभी मत ग्रहण करो। पुरुष हो, भावना हो या अस्था। अपने से बाहर उसके स्वतंत्र व्यक्तित्व को स्वीकारो'[1]

कालिदास उज्जयिनी जाने के लिए तैयार नहीं है, तो अंबिका को लगता है, कि कालिदास सम्मान बढाने का बहाना कर रहा है। अंबिका लोक नीति के तौर तरीके भी अच्छी तरह जानती है। विलोम भी अम्बिका की अवस्था को सही ढंग से रेखांकित करता है, 'तुम्हारा तो जीवन ही पीडा का इतिहास है।.... समय ने तुम्हारे मन, शरीर और आत्मा की इकाई को तोडकर रख दिया है। तुमने तिल-तिल कर के अपने को गलाया है कि मल्लिका को किसी अभाव का अनुभव न हो। और आज जब कि उसके लिए जीवन भर के अभाव का प्रश्न सामने है, तुम कुछ सोचना नहीं चाहती[2]?' यहाँ हतबल माँ का मूक आक्रोश प्रकट हुआ है। कालिदास के उज्जयिनीजाने के बाद मल्लिका को जो दु:ख हुआ उसे केवल अम्बिका ही जान सकती है। अम्बिका एक तरफ कालिदास के स्वार्थी स्वभाव के कारण चिढ भी जाती है, तो दूसरी तरफ मल्लिका के दु:ख की अनुभूति कर के दु:खी भी हो जाती है। जब प्रियंगुमंजरी मल्लिका से पूछती है, कि तुम्हारे मन में कल्पना नहीं है कि तुम्हारा अपना घर परिवार हो ? तब अम्बिका उलाहनाभरा उत्तर देती है, 'इसके मन में यह कल्पना नहीं है, क्योंकि यह भावना के स्तरपर जीती है[3]।' इस प्रकार अम्बिका मल्लिका पर बहुत बडा व्यंग्य अनायास ही लगा देती है। घर भी टूटा है और उस टूटे घर में दोनों माँ-बेटी भी टूटी-सी पडी रहती है। अम्बिका सच्चे यथार्थ के प्रति अथ से इति तक सजग होकर भी बेटी के दुर्भाग्य के लिए कुछ नहीं कर सकती। अम्बिका पीडा की जीवन्त तस्वीर है। असमय वैधव्य के दर्द को पीकर सारी आशाएँ बेटी के उज्ज्वल भविष्य में बाँध कर अम्बिका ने खुद को गला दिया, उसी बेटी को टूटे हुए रुप में देखना पडा। माँ के मन की मूक पीडा राकेश ने

---

१ सारीका - मार्च - १९७३ - पृ.६१

२ आषाढ का एक दिन - मोहन राकेश पृ.२५-२६

३ - वही - पृ.७४

गहराईमें उतरकर देखी है । कालिदास के प्रति मल्लिका के समर्पण को अम्बिका आखिरतक ठीक तरह से नहीं समझ सकी, ` अब भी रोती हो ? उसके लिए ? उस व्यक्ति के लिए जिसने ....[१] ` यहाँ आहत माँ के हृदय की पीडा अपने आप उमड पडी है । अम्बिका एक ममतामयी माँ है । दूसरे अंक में जब मल्लिका हताश हो जाती है, तब अम्बिका का क्रोध करुणा में बदल जाता है और वह सिसकती मल्लिका को अपने आँचल में समेट लेती है ।

अम्बिका एक आदर्श माँ है । वह मल्लिका के फिसलते जीवन को सँभालना चाहती है, उसे स्थिरता देना चाहती है, लेकिन उसमें असफल रहती है और अंत तक अपनी असफलता की मर्मांतक वेदना सहती हुई जीती रहती है । इस प्रकार पूरे नाटक में अम्बिका के जरिए माँ की ममता का चिरस्थायी रुप अपना गहरा असर छोड जाता है । इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि अम्बिका का सम्पूर्ण जीवन करुणामयी, ममतापूर्ण और व्यथित नारी की गाथा है ।[२] `

प्रियंगुमंजरी --

प्रियंगुमंजरी उज्जयिनी की राज दुहिता है । वह परम विदुषी और व्यवहार कुशल है, फिर भी स्त्रियोचित गुणा वगुर्णो से परिपूर्ण है । वह कालिदास की पत्नी बन कर हमारे सामने पहली बार आती है । वह पति के साथ पति के ग्राम-प्रान्तर को देखने के लिए राजकीय यात्रा के दौरान आती है ।

प्रियंगुमंजरी एक राजनीति-पटु और चतुर नारी है । वह ग्राम-प्रान्तर में आने के बाद मल्लिका से मिलती है और मल्लिका की दीन दशा को देख कर दु:खी भी होती है । मल्लिका की दशा पर दु:ख प्रक्ट करके उसे सहायता करना चाहती है । वह मल्लिका के घर की मरम्मत करवाना चाहती है, लेकिन मल्लिका उसे अस्वीकार करती है । तब वह कहती है, ` फिर भी चाहूँगी, कि इस घर का परिसंस्कार हो जाए । उनके जीवन के आरम्भिक वर्षों का इस घर के साथ भी सम्बन्ध रहा है ।[3] ` वह मातुल के घर का भी परिसंस्कार करा देती है । मल्लिका

---

१ आषाढ काएक दिन - मोहन राकेश पृ.८६

२ स्वातंत्र्योत्तर हिंदी नाटक मोहन राकेश के विशेष सन्दर्भ - - डॉ. रीता कुमार पृ.२९६

३ आषाढ का एक दिन - मोहन राकेश पृ.७१-७२

के निर्व्याज सुन्दरता की वह मुक्त कण्ठ से प्रशंसा करती है। उस प्रदेश के निसर्ग सौन्दर्य का भी वह बडी रसिकता से अनुभव करती है।' इस सौन्दर्य के सामने जीवन की सब सुविधाएँ हेय है। इसे आँखों में व्याप्त करने के लिए जीवन-भर का समय भी पर्याप्त नहीं।'[१]

प्रियंगुमंजरी एक अतिथि के रुप में ग्राम-प्रान्तर में आती है, लेकिन खुद को अतिथि नहीं समझती। वह खुद को एक सामान्य नारी समझती है और कहती है,' आतिथ्य की बात मत सोचो। मैं तुम्हारे यहाँ अतिथि के रुप में नहीं आई हूँ।'[२] यहाँ प्रियंगुमन्जरी एक उदार नारी के रुप में सामने आती है।

प्रियंगुमन्जरी राजदुहिता है इसलिए उसे राजनीति का विशेष ज्ञान है और साथ-ही-साथ वह राजनीति में विशेष रुचि भी लेती है। राजनीति और साहित्य की विशिष्टता को स्पष्ट करते हुए वह कहती है,' राजनीति साहित्य नहीं है। उसमें एक-एक क्षण का महत्व है। ..... राजनीतिक जीवन की धुरी में बने रहने के लिए व्यक्ति को बहुत जागरुक रहना पडता है।'[३] राजनीतिक समस्याओं का उसे ज्ञान है। एक शासक के रुप में समय का महत्व और अधिकार का क्षेत्र सब के लिए वह सजग है।

कालिदास की अर्धांगिनी प्रियंगुमंजरी कालिदास की भावनाओं का और कर्तव्य का पूर्णत: ख्याल रखती है। कालिदास को कवि होकर भी आज एक प्रदेश के शासक के रुप में अपनी जिम्मेदारी को उठाने में तत्पर रखने का आग्रह उसमें है। ' साहित्य उनके जीवन का पहला चरण था। अब वे दूसरे चरण में पहुँच चुके हैं। मेरा अधिक समय इसी आयास में बीतता है, कि उनका बढा हुआ चरण पीछे न हट जाए।'[४] कालिदास जिस चीज की कमी महसूस करता है, उसे पूरा करने की उम्मीद प्रियंगुमंजरी में है।' यहाँ का कुछ वातावरण साथ ले जाना चाहती हूँ। यह इसलिए कि उन्हें अभाव का अनुभव न हो।'[५]

---

१ आषाढ का एक दिन - मोहन राकेश - पृ.६८

२ - वही - पृ.६७

३ - वही - पृ.७०

४ - वही - पृ.७०

५ - वही - पृ.७१

इस नाटक में मल्लिका और प्रियंगुमंजरी दोनों भी भारतीय नारी की परम्परागत भूमिका निभा रही है। दोनों भी पुरुष को समर्पित है। एक भावना के स्तर पर, तो दूसरी व्यावहारिक स्तर पर। इस प्रकार यहाँ भाव और वास्तव दोनों अपनी अपनी पूर्णावस्था में दिखाई देते हैं।

प्रियंगुमंजरी मल्लिका को माँ के साथ उज्जयिनी चलने का आग्रह करती है। उज्जयिनी जाकर उसे कुछ धन और कपडे भी भेजती है, लेकिन मल्लिका उसे अस्वीकार करती है। वह मल्लिका का किसी राज्याधिकारी के साथ विवाह करा देना चाहती है, परंतु मल्लिका उसके लिए तैयार नहीं है। प्रियंगुमंजरी मल्लिका और अम्बिका के कष्ट को अच्छी तरह समझती है और उनके कष्ट को दूर भी करना चाहती है, परंतु अस्वीकृति के कारण कुछ कर नहीं सकती। वह मल्लिका के संबंध में अपनी तरफ से सोचती है, अपने राजसी अभिमान में मल्लिका को दया का पात्र बनाना चाहती है। एक दीन-दु:खी लडकी के लिए शादी ही सबसे बडा कर्तव्य मान कर वह उसे पूरा करना चाहती है। लेकिन मल्लिका के मन की, प्रेम की, भावनाओं की गहराई तक वह जा ही नहीं सकती। वह मल्लिका की आन्तरिक भावना को पकड नहीं पाती। वह कृत्रिम साधनों से मल्लिका के अभाव को भरना चाहती है और वह भावना के स्तर पर पिछड जाती है। इस तरह मल्लिका के समर्पण के सामने प्रियंगुमंजरी के सारे प्रस्ताव फीके पड जाते है।

प्रियंगुमंजरी कालिदास की पत्नी, राज-दुहिता, एक शासक, सहृदय और दयालु नारीआदि रूपों में अपनी छोटी भूमिका में भी प्रभावी रही है। उसकी छोटी बडी बातों में उसकी सफलता का प्रमाण मिलता है। प्रियंगुमंजरी में रुप और वैभव का अभिमान, मल्लिका के प्रति ईर्ष्याभाव और कालिदास पर अधिकार जमाने की भावना मिलती है। वह दूसरों पर छा जाने वाली और सजग नारी है। ऐसी नारियाँ हर समाज तथा हर वर्ग में होती है और यह एक मनोवैज्ञानिक सत्य भी है।

रंगिणी-संगिनी --

मल्लिका, अम्बिका, प्रियंगुमंजरी के साथ - साथ रंगिणी-संगिनी दो अन्य नारी-पात्र भी है, लेकिन नाटक में उनका कोई महत्वपूर्ण स्थान नहीं है। इन पात्रों के माध्यम से वर्तमान युग की कुछ समस्याओं पर प्रकाश डालना ही लेखक का उद्देश्य रहा है। कालिदास और प्रियंगुमंजरी के साथ कालिदास के जीवन का अध्ययन करने के लिए रंगिणी-संगिनी ग्राम-प्रान्तर में आती है। लेकिन अध्ययन के लिए लगने वाली पैनी दृष्टि और शोध-प्रवृत्ति उन दोनों में भी नहीं है। ये दोनों मल्लिका के घर आती है और कुछ शब्दों के सम्बन्ध में मल्लिका से पूछताछ करती हैं, जिसके माध्यम से कालिदास के जीवन का वे अध्ययन करना चाहती है। रंगिणी कहती है, ' राजकीय नियोजन से हम दोनों कवि कालिदास के जीवन की पृष्ठभूमि का अध्ययन कर रही है। तुम समझ सकती हो कि यह कितना बडा और महत्वपूर्ण कार्य है। परन्तु यहाँ घूमकर हम तो लगभग निराश हो चुकी है। यहाँ कुछ सामग्री है ही नहीं।'[१] वे मल्लिका को समझाती है कि कालिदास के जीवन की पृष्ठभूमि का अध्ययन करने का कार्य बहुत ही महत्वपूर्ण और कठिन है। परंतु बहुत घूमकर भी उन्हें कालिदास के जीवन के सम्बन्ध में कुछ भी सामग्री नहीं मिलती है। अत: वे निराश होकर ' रहने दे संगिनी। यह यहाँ के सम्बन्ध में विशेष कुछ नहीं जानती।'[२] यह कहकर चल देती हैं। यहाँ लेखक ने आज के दिखावटी शोधार्थियों पर करारा व्यंग्य किया है। जिस जगह शोध सामग्री मिलनेवाली है, उसकी महत्ता को न पहचान पाना आज के शोधार्थियों की ट्रेजेडी है।

निष्कर्ष --

यह कहा जा सकता है, कि 'आषाढ का एक दिन' में नारी का जो समर्पण और त्याग दिखाया गया है वह सरासर एक तरफा या एकांगी लगता है। यहाँ नारी तो टूट जाती ही है, परंतु साथ-ही-साथ उस नारी से सम्ब परिवार

---

१ आषाढ का एक दिन - मोहन राकेश - पृ.५७-५८

२ - वही - पृ.५८

भी विघटन का अनुभव करता है। स्त्री-पुरुष सम्बन्ध के सामाजिक वैषम्य से नारी बिखर कर टूट जाती है। मल्लिका का समर्पण भावुकता पूर्ण है। वह दो पुरुषों-कालिदास और विलोम-के बीच घुटती जाती है। यहाँ एक तरफ भावनाओं की तरलता लिए कालिदास है, तो केवल व्यवहार जाननेवाला, बौध्दिकता का कुत्सितता से उपयोग करनेवाला विलोम दूसरी तरफ है। दोनों भी मल्लिका को चाहते हैं, लेकिन दोनों के चाहने में भावना और शारीरिकता का फर्क है। व्यावहारिकता और कुटिलता के कारण विलोम मल्लिका का शरीर तो जीत लेता है, लेकिन मल्लिका का मन नहीं जीत सकता। दूसरी तरफ कालिदास में दृढता का अभाव है, जिससे वह जीवन में असफल रहता है। अन्त में जब मल्लिका जीवन भर की भावना-प्रेम की आशा लेकर सामने आती है, तो यथार्थ को फेस करने के बजाय दोलायमान स्थिति में मल्लिका को छोड चला जाता है। इस प्रकार मल्लिका दोनों ओर से पूर्णत्व के अभाव में अपूर्ण और प्यासी की प्यासी रह जाती है।

वास्तविकता तो यह है, कि नारी पुरुष की सच्चे अर्थ में प्रेरणा और स्फूर्ति है। मल्लिका भी कालिदास के सर्जनात्मक कार्य में सहायक और प्रेरक रही है। पुरुष प्रेरणा पाकर आगे तो बढता है, परन्तु पीछे सहने को मात्र रहती है अकेली नारी। परिस्थितियों के साथ संघर्ष करते करते वह टूट जाती है। असहाय और अबला होने से उसे अनचाही बातों को अपनाना पडता है। उसकी शारीरिक और भावनात्मक स्तर पर जीवनभर खींचातानी चलती रहती है। आज भी पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव से विषम परिस्थितियों के भँवर में फँसी ऐसी अनेक नारियाँ घुटन और विषमता महसूस करती है। प्रियंगुमंजरी भी आदर्श पत्नीके नाते और अम्बिका एक टूटी हारी और अनुभवी माँ के नाते अपना प्रभाव छोड जाती है।

लहरों के राजहंस

आज के दुविधाजनक मानव की अन्तर्व्दन्व्द परम्परा का मोह, आधुनिक जीवन मूल्यों का उद्घाटन , मानव-चेतना की व्दन्व्द ग्रस्त परिस्थिति,प्रवृत्ति-निवृत्ति के बीच अटका संशय-ग्रस्त मानव, पार्थिव-अपर्थिव का संघर्ष, नारी-पुरुष के बीच की विषमता,नारी पुरुष की अलग अलग जीवन दृष्टियाँ,नारी पुरुष के बीच आकर्षण आदि बातों पर आधारित मोहन राकेश के नाटक ` लहरों के राजहंस` के सुन्दरी, अलका,नीहारिका,यशोधरा आदि प्रमुख नारी-पात्र हैं ।

सुन्दरी -

` लहरों के राजहंस` नाटक को केन्द्र तथा नाटक की नायिका सुन्दरी है, जो रुपगर्विता, विदुषी,कामुक, चतुर, कर्कश, कटुता-स्पर्धा-ईर्ष्या से भरी, आत्मरति से भरी, विलासिनी, स्वयं-निर्भर ,दृढ आत्मविश्वास तथा इच्छा शक्ति रखनेवाली नारी है।` फ्रायड` का` इड` और ` इगो ` उसमें पूर्ण रुप से विद्यमान है । नाटक के सभी पात्र और प्रसंग सुन्दरी के वृत्त में घूम रहे हैं । नाटक के तीनों अंकों में दिखाया गया संघर्ष मुख्य रुप से सुन्दरी के आत्म-संघर्ष से जुडा हुआ है । सुन्दरी,नाम की तरह इतनी सुन्दर है,कि आम लोगों में यक्षिणी कहलाती है । पूरे नाटक में चले पार्थिव अपार्थिव व्दन्व्द में सुन्दरी पार्थिवता पर विश्वास रखती है । नाटक में सुन्दरी का चरित्र इतना प्रभावशाली हुआ है,कि नन्द का चरित्र उसके समक्ष दबा-दबासा,विवश और असहाय दिखाई देता है । अपने मोहजाल में फँसा कर नन्द को बौध्द भिक्षु बनने से रोकना चाहती है । उस पर अहं का मद भी सवार है । अपने आत्म विश्वास के बलपर वह अपनी बातों पर अडिग रहती है । सुन्दरी की `संवेदना का केन्द्र स्थल उसकी अहं चेतना है । .... सह लेने का दर्द सुन्दरी के अहम् चैतन्य की चरम परिणति है[1]।` सुन्दरी मध्य

---

१ मोहन राकेश की रंगसृष्टि - जगदीश शर्मा - पृ.३३

युगीन नारी है, लेकिन मध्ययुगीन नारी का प्रतिनिधित्व नहीं करती । उसमें उस काल के अनुसार पुरुष के सामने दीन आत्मसमर्पण नहीं है ।

नाटक में सुन्दरी सर्वप्रथम अलका के साथ हमारे सामने आती है । वह कामोत्सव के सम्बन्ध में बड़े गर्व के साथ अलका से कहती है, कि " रात के अन्तिम पहर तक । भोज ,आपानक और नृत्य । वर्षों तक याद बनी रहनी चाहिए लोगों के मन में ।[1] " यहाँ कामोत्सव के आयोजन के पीछे सुन्दरी का " अहं " सजग है । वह जीवन की सार्थकता कामनाओं की पूर्तिमें ही मानती है । सिध्दार्थ कामनाओं को जीत कर गौतम बुध्द बना है, लेकिन सुन्दरी पूछती है, " कामनाओं को जीता जाए, यह भी क्या मन की कामना नहीं ?[2] " सुन्दरी शारीरिक सुख और भोग-विलास में सब कुछ मान कर उसीमें मस्त रहना चाहती है । यहाँ सुन्दरी की भोगवादी प्रवृत्ति स्पष्ट रुप से दिखाई देती है । नन्द के मन की दुर्बलता वह अच्छी तरह जानती है । गौतम बुध्द और यशोधरा की भाँति नन्द भी अपार्थिव प्रवृत्ति की ओर आकर्षित हो जाए, यह वह नहीं चाहती, अत: वह कामोत्सव का आयोजन उसी दिन करती है, जिस दिन यशोधरा भिक्षुणी बन कर भिक्षुणियों के शिबिर में जाने वाली है । कामोत्सव का आयोजन नन्द से लेकर दास-दासियों तक किसी को भी अच्छा नहीं लगता । इसीलिए श्यामांग कहता है - " आयोजन किया है इस बार जब आम के वृक्षों ने भिक्षुओं का वेष धारण कर रखा है ।... कल प्रात: देवी यशोधरा भिक्षुणी के रुप में दीक्षा ग्रहण करेंगी, और ....यहाँ रात भर नृत्य होगा । आपानक चलेगा ।[3] " परन्तु सुन्दरी के सामने कोई स्पष्ट रुप से कुछ कह नहीं सकता । नन्द और श्यामांग में शुरु से ही सूक्ष्म रुप में बुध्द के अपार्थिव तत्व की प्रबलता दिखाई देती है । श्यामांग की कृतियों में भोग-विरोधी भाव मुखर होता है, जो सुन्दरी को सलता है और इसलिए श्यामांग को देख कर उसे उलझन होती है ।

---

१ लहरों के राजहंस - मोहन राकेश - पृ.४५
२ - वही - पृ.५०
३ लहरों के राजहंस - मोहन राकेश पृ.४७

सुन्दरी पर फ्रायड के काम तत्वों का प्रभाव दिखाई देता है। सुन्दरी एक भोगवादी नारी है। वह दाम्पत्य सम्बन्धों को भोग और कामना के बीच निभाती है यह भरापूरा यौवन और हृदय में धूल-भरा आकाश।[१]' अलका के प्रति निकले ये उद्गार सुन्दरी के विलासिनी रुप के निर्देशक है। रुप और यौवन का इस्तेमाल भोग-विलास में न हो तो उसकी सार्थकता क्या है? सुन्दरी जीवन को भरपूर जीना चाहती है। उसकी जीवनदृष्टि रागात्मक है।' एक नारी है सुन्दरी, जो प्रत्यक्ष मांसल वास्तविकता के धरातल पर जीती है। उसके निकट उसकी कामनाएँ अत्यंत सत्य है तथा वह अपनी बुध्दि चातुर्य एवं सौंदर्य की सम्पूर्ण शक्ति से उनको पूरा करती है।[२]' सुन्दरी में यौवनाकर्षण का दर्प है। वह भोग-विलास में मशगुल रहकर अपने पति को भी उसी में बाँध रखने की कोशिश करती है। वह इंद्रिय के स्तर पर जीती है। उसकी नन्द के समान द्विधा मन:स्थिति नहीं है। उसमें केवल यथार्थ-अयथार्थ के बीच मूक व्दन्व्द है। सुन्दरी को यशोधरा के सम्बन्ध में ' सोच कर खेद होता है, कि इतने वर्ष पीडा सहने के बाद भी देवी यशोधरा अपनी पीडा का मान न रख सकी। बहुत सहानुभूति भी होती है।[३]' सुन्दरी को लगता है कि यशोधरा का भिक्षुणी बनना उसके जीवन की असफलता है। इतने दिनों की यशोधरा की विरह-पीडा अन्त में बुध्द के विचारों में लीन होकर अपने स्वत्व को खोकर मानो अपना' मान' नहीं रख सकी। अपार्थिव के प्रति या अपने पति के व्यक्तित्व के प्रति यशोधरा का यह समर्पण सुन्दरी को निरर्थक लगने से वह यशोधरा के प्रति सहानुभूति प्रकट करती है। सुन्दरी अलका से कहती है,' देवी यशोधरा का आकर्षण यदि राजकुमार सिध्दार्थ को बाँध सकता है, तो क्या आज भी राजकुमार सिध्दार्थ ही न होते? ... नारी का आकर्षण पुरुष को पुरुष बनाता है, तो उसका अपकर्षण उसे गौतम बुध्द बना देता है।[४]' सुन्दरी का यह स्पष्ट मत है, कि पुरुष को किस मार्ग की

---

१ लहरों के राजहंस - मोहन राकेश - पृ.क्र.४९
२ मोहन राकेश का नाट्य साहित्य - डॉ.पुष्पा बंसल - पृ.क्र.९८
३ लहरों के राजहंस - मोहन राकेश - पृ.क्र.४९-५०
४ लहरों के राजहंस - मोहन राकेश पृ.क्र.५०

SHIVAJI UNIVERSITY LIBRARY KOLHAPUR

ओर प्रवृत्त करें यह पूर्ण रूप से स्त्री पर ही निर्भर है । वह यह भी मानती है, कि पति को अपने प्रेम पाश में बाँध कर रखना, भोग-विलास में डुबाना यही स्त्री का कर्तव्य है । इससे यह कहना उचित लगता है कि सुन्दरी के मध्यम से नाटककार ने समाज के लिए कोई आदर्श प्रस्तुत नहीं किया है ।[१] सुन्दरी समुचित परिधि में विचरण करनेवाली विलासिनी, आत्मरत और कामुक नारी है, जो खुद को जीवन में सफल देखना चाहती है । यशोधरा के प्रति उसके मन में एक नारी सुलभ ईर्ष्या का भाव है । गौतम बुध्द के प्रति लोगों में होनेवाले आकर्षण के सम्बन्ध में वह कहती है, 'बहुत दिन एकसार जीवन बीताकर लोग अपने से ऊब जाते हैं। तब जहाँ भी कुछ नवीनता दिखाई दे, उसी ओर वे उमड पडते हैं। यह उत्साह दूध-फेन का उबाल है । चार दिन रहेगा, फिर शान्त हो जाएगा ।'[२] वह राजहंसों के कूजन या किलोल के आगे बुध्द की अमरत्व की बातें निरर्थक और सारहीन मानती है । यशोधरा नाटक में अप्रत्यक्ष रूप में होकर भी सुन्दरी के मन में अन्त तक विद्यमान रहती है । यशोधरा और सुन्दरी में दो परस्पर विरोधी प्रवृत्तियों का संघर्ष है । सुन्दरी अपने ही विचारों के वृत्त से घिरी हुई है, इसलिए देवी यशोधरा के आशीर्वाद को आत्मवंचना की सीमा कहने में नहीं झिझकती । वह राजमहिषी है इसलिए दर्प एवं आत्म-सम्मान को अतिरिक्त महत्व देती है ।

सोमदत्त और विशालदेव के यहाँ नन्द का खुद जाना सुन्दरी को अपमान-सा लगता है । मैत्रेय आकर जब कामोत्सव को उपस्थित रहने की सब की असमर्थता प्रकट करता है, तब सुन्दरी की कामोत्सव के सम्बन्ध में सारी आशाएँ भंग हो जाती है और वह मर्माहत होती है । फिर भी अपना विषाद छिपा कर दर्प के साथ मैत्रेय से कहती है, 'कामोत्सव कामना का उत्सव है, आर्य मैत्रेय । मैं अपनी आज की कामना कल के लिए टाल रखूँ - क्यों,? मेरी कामना मेरे अन्तर की है । मेरे अन्तर में ही उसकी पूर्ति भी हो सकती है । बाहर का

---

१ मोहन राकेश के नाटक - डॉ. विजराम यादव - पृ.९६

२ लहरों के राजहंस - मोहन राकेश पृ.५१

आयोजन उसके लिए उतना महत्व नहीं रखता, जितना कुछ लोग समझा रहे हैं।[१] यहाँ सुन्दरी के भीतर अहंकार की प्रबलता दिखाई देती है। उसकी मनोवृत्ति अपराजेय है। अतिथियों के न आने का कारण वह षड्यंत्र समझाती है। सुन्दरी की वैचारिक चेतना पुष्ट नहीं है। इसलिए उसकी चेतना में विकृत मानसिक प्रतिक्रियाएँ और पूर्वग्रह जुड़े हुए हैं। ये उसे आत्म-प्रवंचना के भाव से ग्रस्त करते हैं, जो जीवन का एक निषेधात्मक मूल्य है।[२] अपने अहं को अतिरिक्त महत्त्व देने के कारण सुन्दरी अपनी असफलता को मान्य नहीं करती।

सोई हुई सुन्दरी को देखकर नन्द कहता है, "उस समय तुम क्रोध में थी, तो कितनी उग्र, कितनी, कठोर, कितनी प्रखर लग रही थी। इस समय सो रही हो, तो कितनी करुण, कितनी निर्भर, कितनी अबोध लग रही हो।"[३] यहाँ नारी के दो रूपों का दर्शन होता है। नन्द सुन्दरी पर, सुन्दरी की सुन्दरता पर अतिरिक्त मुग्ध है। इसलिए वह नन्द के साथ अधिकार भाव से पेश आती है। एक तरह से वह नन्द पर पूर्णतः हावी है। आन्तरिक उलझन उसे दोलायमान अवस्था में ले जाती है। भिक्षु-भिक्षुणियों का सम्वेत स्वर सुनकर मानसिक अस्थिरता के कारण नन्द के हाथ से दर्पण टूट जाता है। मानो यह सुन्दरी के अहं का विघटन ही है। टूटा दर्पण सुन्दरी की आखिरी टूटन का प्रतीक लगता है। टूटे दर्पण में देखकर सुन्दरी कहती है, "अच्छा लग रहा है। यह दो भागों में बँटा चेहरा - खण्डित मस्तक, खण्डित सीमान्त... ...।"[४] यहाँ सुन्दरी की भीतरी टूटन स्पष्ट होती है। ऊपर से केवल विदग्धता दिखाई देती है।

सुन्दरी को पूरा विश्वास है, कि नन्द उसके सौन्दर्य पाश को नहीं तोड सकता। उन दोनों का प्रेम आवेशपूर्ण और वासनात्मक है। नन्द कहता है,

---

१ लहरों के राजहंस - मोहन राकेश पृ. ५७-७१
२ आधुनिक नाटक का मसीहा: मोहन राकेश - डॉ. गोविंद चातक -पृ. ७१
३ लहरों के राजहंस - मोहन राकेश पृ. ७६
४ - वही - पृ. ८९

`मुझे सदा वही करना है, जो तुम चाहोगी, और वैसे ही करना है, जैसे तुम चाहोगी।[1]` इसी विश्वास के आधार पर वह नन्द को बुध्द के यहाँ क्षमा-याचना के लिए भेज देती है। यहाँ सुन्दरी की मानसिक दृढता स्पष्ट होती है। मन की अस्थिरता या द्वन्द्व को वह सतहपर आने नहीं देती। आपके आने तक मैं इस बिन्दु को सूखने नहीं दूँगी।` इस कथन से सुन्दरी का नन्द को अपने से बाँध रखने का प्रयास दिखाई देता है। प्यार का प्रतिसाद मिलने के लिए सुन्दरी नन्द के सम्पूर्ण भावविश्वपर पक्का अधिकार चाहती है। परंतु आखिर अपने सभी दृढ प्रयत्नों के बावजूद भी सुन्दरी बिखर जाती है। उसका अहं ग्रस्त मानस खण्डित, विरूप हो जाता है। वह नन्द से अपने को अलगाना चाहती है। राजहंसों के प्रतीकों द्वारा सुन्दरी के मन की दुविधा प्रकट हुई है।` राजहंस आहत थे .... कम-से-कम एक उनमें अवश्य आहत था। क्या उनके पंखों में इतनी शक्ति रही होगी, कि वे अपनी इच्छा से उडकर कहीं चले जाते, फिर जिस ताल में इतने दिनों से थे, उसका अभ्यास, उसका आकर्षण, क्या इतनी आसानी से छूट सकता था?[2]` एक तरह से यह दोनों के अलगाव का ही उपलक्षण है। परंतु सुन्दरी प्रवृत्तिमार्गी विचारों की है, इसलिए उसे यह सब विश्वसनीय नहीं लगता।

विशोषाक के सूखने से पहले नन्द के लौटकर न आने से सुन्दरी आहत होती है। सुन्दरी असल में नन्द से प्रेम तो करती है, परंतु टूटे अहं को ऊपरी तौरपर बनाए रखते हुए कहती है, `अब मुझे प्रतीक्षा नहीं है। वे जब भी आए, मुझे उनसे कुछ नहीं कहना है। और आने में कोई बाधा है, तो .... मैं ने उन्हें भेजा था, तो एक विश्वास के साथ भेजा था। चाहती, तो रोक भी सकती थी। परंतु रोकना मैं ने नहीं चाहा, क्योंकि ऐसा करना दुर्बलता होती। अब इतना सन्तोष तो है कि दुर्बलता कहीं थी, तो मुझ में नहीं थी।[3]` यह गहरा

---

१ लहरों के राजहंस - मोहन राकेश - पृ.९६

२ - वही - पृ.९८

३ - वही - पृ.१००

आत्मविश्वास सुन्दरी के जीवन दर्शन का द्योतक है । साथ ही साथ उसमें सुन्दरी के पराजित मन की ठान भी सूक्ष्म रूप से सुनाई देती है । अपने अहं की प्रबलता से, वह न बुध्द और यशोधरा से जुडती है न प्रजाजनों से जुडती है तो अहं और सुखवादी दृष्टि से । इसीसे उसके व्यक्तित्व की मूलभूत संभावनाएँ समाप्त हो जाती है ।[1]

केशरहित अवस्था में नन्द को देखकर सुन्दरी हैरान-सी हो जाती है । `लौट आए है ? नहीं । लौटकर वे नहीं आए । जो आया है, वह व्यक्ति कोई दूसरा ही है ।[2]` इस स्थिति में वह नन्द को अपनाना नहीं चाहती । बुध्द के प्रभाव को और अपने मण्डित विश्वास को वह बर्दाश्त नहीं कर सकती । वह नन्द के साथ होकर भी खुद को अकेली महसूस करती है । नन्द की मानसिक बुजदिली उससे सही नहीं जाती, इसलिए वह उलाहने भरे शब्दों में नन्द की अवहेलना करती है । `बाहर और अन्दर में अन्तर है, देख रही हूँ । .... जितने साधारण और लोग है, उतने ही साधारण आप भी है । जितनी आसानी से वे सब प्रभावित हो सकते है, उतनी ही आसानी से आप भी हो सकते है । ... आशंका मेरे मन में तब भी थी, जब मैंने आप को यहाँ से भेजा था । परंतु तब कहीं यही विश्वास भी था कि.... कि पहले के प्रभाव से आप इतनी जल्दी मुक्त नहीं हो पाएँगे ।[3]` इस तरह सुन्दरी पति की ओर से निराश हो गई है । उसका पति नन्द दोलायमान स्थिति में है । वह नन्द से पूर्णता की खोज के लिए व्यंग्यभरे शब्दों में कहती है, `तुम ....। कितने कितने बिन्दु खोजे है, आज तक तुमने ? .... जाओ, एक और बिन्दु खोजो` अन्त में सुन्दरी असफल होकर केवल वेदना भोगने के लिए शेष रह जाती है।` नारी जितनी ही अधिक प्रेम पाती है, उतनी ही अपने अस्तित्व से वह वंचित होती है । और उतनी ही

---

१ आधुनिक नाटक का मसीहा - मोहन राकेश - डॉ. गोविंद चातक - पृ. ७३
२ लहरों के राजहंस - मोहन राकेश पृ. ११६
३ - वही - पृ. ११८-१२०
४ - वही - पृ. १२३

अधिक असुरक्षा और दयनीयता उसके हाथ आती है ।.... स्त्री और पुरुष दोनों के लिए इसीलिए प्रेम विघटनकारी होने के लिए नियति बध्द है ।[१] इस प्रकार नन्द और सुन्दरी वर्तमान मानव की नियति भोग रहे हैं ।

सुन्दरी का अपना विश्वास टूटा है, इसलिए वह आहत है, परंतु नन्द समझाता है, कि उसकी केशरहित अवस्था के कारण वह नाराज है । यह एक दूसरे को न समझ सकने का सिलसिला सदियों से चलता आया है । यहाँ नारी सम्बन्धी पूर्वाग्रह की ओर लेखक ने इशारा किया है।

इस प्रकार अहंपूर्ण बातों का विडम्बनात्मक अन्त सुन्दरी को तोड देता है । उसकी प्रवंचना उसे अलगाव की सीमा तक ला कर पटक देती है । अपने अपराजेय होने के अहम् में उसे स्वयं ही पराजित होना पडता है ।[२] सुन्दरी का इस प्रकार टूटना नारीत्व की एक 'बायरनी' बन गया है । पत्नी होने के बावजूद भी वह पत्नी नहीं बन पाई है, यही उसके चरित्र की विडम्बना है । अपने ही राग रंग में डूबी भोग की समर्थक रूप गर्विता सुन्दरी को हम निष्ठाहीन आस्थाओं और वस्तुवादी दृष्टिवाली नारी कह सकते हैं, जो व्यक्तिको भी वस्तु में परिणत करके अपने अहम् के स्तर को परितुष्ट और सन्तुष्ट कर पाने को ही बडी बात मानती है ।[३] प्रस्तुत नाटक में मोहन राकेश ने सुन्दरी के व्दारा एक जीवन दृष्टि को हमारे सामने रखा है । अपने अहम् के अतिरेक के कारण सुन्दरी जीवन में असफल रहती है ।[४] स्त्री अर्थात् सुन्दरी स्वभाव से चंचल है, अधिकार लिप्सु है, अपने समग्र परिवेश को मुठ्ठी में कस कर, पकड कर नियंत्रित रखना चाहती है, संभवत: खोए जाने के डर से ।

फिर भी दृढ विश्वास और बौध्दिक चेतना सुन्दरी को आधुनिक नारी में समाविष्ट कर देते हैं । आधुनिक नारी भी सुन्दरी के समान अन्तर्व्दन्व्द में जी

---

१ आधुनिक नाटक का मसीहा - मोहन राकेश - डॉ.गोविंद चातक-पृ.६४

२ मोहन राकेश के नाटक - डॉ.द्विजराम यादव - पृ.१०२

३ अपने नाटकों के दायरे में - मोहन राकेश - तिलकराज शर्मा पृ.९९

४ मोहन राकेश का नाट्य साहित्य - डॉ.पुष्पा बंसल - पृ.३७

रही हैं । आज के क्षु यथार्थ में पार्थिव और अपार्थिव की जगह ` शक ` ने ले ली हैं । आज समाज में अनेक प्रलोभनों का तांता लगा हुआ हैं । उन विविध प्रलोभनों के बीच पति स्त्री से बिछड तो नहीं जाएगा ? इसी शक में आधुनिक नारी जी रही हैं ।

अलका --

अलका राजमहिषी सुन्दरी की दासी हैं । वह कर्तव्यपरायण, सेवा-भावी तथा दूसरों के प्रति सहानुभूति सान्त्वना, अनुराग रखनेवाली एक अनन्य प्रेमिका भी हैं । वह किसी भी हालत में सुन्दरी को प्रसन्न रखने का प्रयास करती हैं । जिस प्रकार पूरे नाटक में श्यामांग नन्द का प्रतीक बनकर उपस्थित हुआ हैं, उसी प्रकार अलका भी सुन्दरी की बौध्दिकता का प्रतीक बनकर उपस्थित हुई हैं । अलका का चरित्र स्त्री-पुरुष के बीच की रागात्मक भावना को प्रस्तुत करता हैं । अलका श्यामांग से प्रेम करती हैं, परन्तु यह प्रेम वासनात्मक या आवेगपूर्ण नहीं हैं, बल्कि भावनात्मक हैं । सुन्दरी के व्यक्तित्व और अस्तित्व का अलका का चरित्र स्पष्ट कर देता हैं ।

अलका नाटक में पहली बार सुन्दरी के साथ बातें करती हुई हमारे सामने आती हैं । उसके प्रेम में आस्था, सहानुभूति और अपनापन हैं । उसके मन में पार्थिव-अपार्थिव का संघर्ष नहीं हैं । वह श्यामांग को सुन्दरी के क्रोध से बचाना चाहती हैं, इसलिए श्यामांग से कहती हैं कि, ` तुम सच क्यों नहीं कह देते कि तुमसे अनजाने में अपराध हो गया हैं ? अपराध के लिए क्षमा माँग लो, तो...`[१] अपराध माफ किया जाएगा । अलका के मन में श्यामांग के प्रति अनुराग हैं । इसलिए वह श्यामांग को बचाने को प्रयास करती हैं । जब श्यामांग के अपराध के लिए सुन्दरी उसे दक्षिण के अंधकूप में उतार देने का आदेश देती हैं, तब अलका कहती हैं, ` मैं केवल यह सोच रही थी कि ... उसने जो कुछ किया हैं, शायद जान-बूझकर नहीं किया । ... छाया की बात में मैं विश्वास नहीं करती ।

---

१ लहरों के राजहंस - मोहन राकेश -पृ.५४

परंतु कितने दिनों से देख रही हूँ, कि धीरे-धीरे उसे कुछ होता जा रहा है ।... अपनी मानसिक शक्तियों पर से उसका अधिकार उठता जा रहा है ।..... उसे सहानुभूति और उपचार की आवश्यकता है देवि । मैं कितना चाहती थी, कि उसके लिए मैं ... कि उसके लिए कोई ऐसा कुछ कर सके जिससे वह....[१] स्वस्थ हो जाए । यहाँ जाहिर होता है, कि अलका के मन में श्यामांग के प्रति सहानुभूति है ।

अलका का सपना सुनकर सुन्दरी कहती है, कि प्रभात के सपने सच होते हैं, अत: कुछ उपाय करना होगा । नहीं तो तू भी कल भिक्षुणी का वेष धारण करने की बात सोचने लगेगी । तब अलका कहती है, मानो अलका के रूप में सुन्दरी का अन्तर्मन ही बोल रहा है कि, ' मैं और भिक्षुणी का वेष ? नहीं , मैं तो यह बात सोच भी नहीं सकती, मैं तो यहीं सोचकर सिहर जाती हूँ कि कल ... सच, कल भिक्षुणी के वेष में यशोधरा कैसी लगेगी ?[२] ' अलका का जीवन साधा, सहज और सरल है । ' देवी यशोधरा का आकर्षण यदि राजकुमार सिध्दार्थ को बाँध सकता है, तो क्या आज भी राजकुमार सिध्दार्थ ही न होते ।'[३] अलका सुन्दरी के इस कथन से सहमत नहीं है । वह मानती है कि पुरुष को केवल पार्थिव सुविधाओं के बीच बाँध कर रखना ही स्त्री के कर्तव्य की इतिश्री नहीं है । सुन्दरी के उपर्युक्त कथन में उसका मत्सरी, ईर्ष्यालु और कामुक स्वभाव दिखाई देता है, तो ' ऐसा न कहें देवी ....[४] ' में अलका की अगतिक सहानुभूति उमड पडती है । ' अलका यों तो सुन्दरी की दासी है, पर वास्तव में नाटक में उसकी रचना सुन्दरी के मुखर, माँसल, उपभोगम्य प्रेम के समक्ष

---

१ लहरों के राजहंस - मोहन राकेश - पृ. ५७-५८

२ - वही पृ. ४९

३ - वही - पृ. ५०

४ - वही - पृ. ५०

एक मौन भावनात्मक सर्वस्व समर्पणशील प्रेम को उभारती है ।'[1]

श्यामांग के पत्थर फेंकने के पीछे उसका मानसिक असन्तुलन ही है यह अलका अच्छी तरह से जानती है । श्यामांग ने जो किया है वह, 'उन्माद में नहीं, तो सोच समझकर भी नहीं किया है । मैं कब से देख रही हूँ कि अपने अन्दर-ही-अन्दर कहीं खोया जा रहा है ... कि उसके मन में कुछ ग्रन्थियों-सी उलझ गई है, जिनके कारण वह ... उसे सहानुभूति और उपचार की आवश्यकता है ।'[2] अलका के इस कथन से यह स्पष्ट होता है कि सहानुभूति से सब कुछ हो सकता है, दंड या सजा देने से नहीं । वह श्यामांग के लिए रात भर जाग कर उसकी सेवा करती रहती है । इस प्रकार अलका में अनुराग और सेवा भाव का अनोखा मिश्रण दिखाई देता है । वह प्रेम में सब कुछ देना जानती है । अपने काम में भी वह सदैव तत्पर है । वह सुन्दरी के मनोभावों का हमेशा ख्याल रखती है । उसकी प्रसन्नता के लिए सदैव प्रयत्नशील रहती है । कर्तव्यपरायणा होने से वह अपने कर्तव्य के प्रति सदैव सक्रिय रहती है । अनुराग के समय में भी वह राजसेवा से कभी विमुख नहीं दिखाई देती । रात भर जाग कर श्यामांग की सेवा करने के बाद भी वह सुन्दरी के प्रसाधन में हाथ बँटाना चाहती है । नन्द बुद्ध के यहाँ से बहुत देर तक वापस नहीं आता तब वह अत्यधिक चिन्तित होकर कहती है, 'ऐसा नहीं हो सकता कि वे न आएँ - यह आप भी जानती हैं । अब तक न आने का एक कारण यह भी तो हो सकता है कि समय पर न आ पाने का संकोच ही उन्हें रोके हो, या उधर से ही आर्य-मैत्रेय के साथ आखेट पर निकल गए हों ।'[3] वह श्वेतांक को नन्द का समाचार लाने के लिए भेजती है, क्योंकि वह सुन्दरी को प्रसन्न देखना चाहती है । नन्द के दीक्षित होने का समाचार सुनकर सुन्दरी अत्यंत दुःखी होगी, यह सोचकर अलका सुन्दरी को यह समाचार बताना नहीं चाहती ।

---

1 मोहन राकेश का नाट्य साहित्य-डॉ. पुष्पा बंसल पृ. ३२
2 लहरों के राजहंस - मोहन राकेश पृ. ५७-५८
3 - वही - - पृ. १००-१०१

इस प्रकार प्रतीकात्मक चरित्र के रूप में अलका एक आदर्श प्रस्तुत करती है । अलका ने नाटक में सेविका के साथ प्रेमिका की भूमिका भी सफलतापूर्वक निभाई है ।

नीहारिका --

नाटक में नीहारिका का चरित्र गौण है । वह राजप्रासाद की सेविका है । वह सेवा भाव के कारण दर्शकों का मन आकृष्ट करती है । वह कामोत्सव के आयोजन में श्वेतांक और श्यामांग के साथ कुछ काम करती हुई हमारे सामने आती है । सुन्दरी की सेवा करने का उसे जब कभी मौका मिलता है, तब वह बडी तत्परता से सेवा कार्य में जुट जाती है । सुन्दरी खुद का प्रसाधन करने के लिए अलका को पुकारती है, तब वह कहती है, कि, ` अभी अभी बाहर गई है । कह गई है, कि आपका कोई आदेश हो, तो मैं....`[१] कर दूँ । इस प्रकार नीहारिका एक साधारण सेविका के रूप में नाटक में उपस्थित है ।

यशोधरा --

यशोधरा कुमार सिध्दार्थ की पत्नी है । वह नाटक में प्रत्यक्ष रूप से कहीं भी उपस्थित नहीं है । परंतु नन्द, सुन्दरी के साथ साथ नाटक के सभी पात्रों के मन में अप्रत्यक्ष रूप में विद्यमान है । सुन्दरी के मन में यशोधरा को लेकर ईर्ष्या, कटुता और शायद स्पर्धा का भाव है । परंतु अन्य पात्रों के मन में यशोधरा के प्रति श्रध्दा का भाव है । यशोधरा की इतने वर्षों सही हुई पीडा बुध्द के उपदेश के प्रभाव से गल कर भिक्षुणी बनने में परिणत होती है । इससे यह स्पष्ट होता है कि देवी यशोधरा पति के सामने स्वयं का अस्तित्व मिटाने - वाली, स्वयं पीडा सह कर भी पति की उन्नत्ति चाहनेवाली, परम्परावादी आदर्श पत्नी है ।

---

१ लहरों के राजहंस - मोहन राकेश - पृ. ७९-८०

निष्कर्ष --

यह कहा जा सकता है कि लहरों के राजहंस में नारी का एक तरफा त्याग गौण हो गया है और स्त्री-पुरुष के बीच की विषमता उभर आई है। स्त्री-पुरुष की अलग अलग जीवन दृष्टियाँ एक दूसरे से टकराती हैं। नारी - पुरुष सम्बन्ध में आकर्षण के साथ साथ अपकर्षण भी रहता है। इस नाटक में स्त्री अपना अलग तथा प्रभावी व्यक्तित्व लिए हुए है।

आधे-अधूरे --

परिवारिक विघटन, पुरुष की अपूर्णता, अपने लिए घर की तलाश, कमानेवाली स्त्री के स्वच्छंद यौन संबंध, काम वासना की अतृप्ति, आर्थिक समस्या तथा पाश्चात्य सभ्यता का अंधानुकरण आदि बातों पर आधारित मोहन राकेश के विख्यात नाटक 'आधे-अधूरे' के सावित्री बीना और किन्नी आदि प्रमुख नारी पात्र हैं।

- सावित्री -

सावित्री 'आधे-अधूरे' की नायिका, प्रमुख नारी पात्र और क्रियाशील महिला है। वह मध्यवित्तीय परिवार की कमानेवाली, अपने ही किस्म की, आकर्षक औरत है। जिसकी उम्र चालीस को छूती। चेहरे पर यौवन की चमक और चाह भी फिर शेष। आर्थिक और पारिवारिक ढंग से टूटे हुए बेरोजगार आदमी महेंद्रनाथ की पत्नी। दो लडकियों तथा एक लडके की माँ। उसके इर्द-गिर्द चार पुरुष हैं - उसका पति महेंद्रनाथ, उसका बॉस सिंघानिया, पति के व्यवसाय का हिस्सेदार (पार्टनर) जुनेजा, जिसे वह अपने पति की तबाही का कारण मानती है, चौथा पुरुष उसका पहला प्रेमी है मनोज, जिसके साथ भाग जाने की बात उसने एक बार सोची थी, परंतु समयपर निर्णय न कर सकने से वह ऐसा कर नहीं सकी। परिस्थितियों के भँवर में फँसी हुई स्त्री के असफल व्यक्तित्व के समान ही सावित्री के चरित्र का इस नाटक में प्रकटीकरण हुआ है।

नाटक में पहली बार दफ्तर से आई हुई तथा घर की अव्यवस्था को देखकर झुंझलाहट से सबको कोसती हुई सावित्री हमारे सामने आती है । वह घर आते ही पुरुषा की आलोचना करती है । वह नाराज होकर कहती है -- ` यह अच्छा है कि दफ्तर से आओ, तो कोई घर पर दिखे ही नहीं । कहाँ चले गए थे तुम ? .... पता नहीं, यह क्या तरीका है इस घर का ? रोज आने पर पचास चीजें यहाँ वहाँ बिखरी मिलती हैं ।[१] ` सावित्री दफ्तर से घर आने पर कभी भी संतुष्ट नहीं नजर आती । पति-पत्नी में किसी-न-किसी बात को लेकर सदैव अनबन होती रहता है । दोनों एक-दूसरे को नीचा दिखाने पर तुले हुए नजर आते हैं । वह चाहती है कि पति दिनभर घर में निठल्ला रहता है । तो अपने कपडे तो ठिकाने पर रख दे, चाय के बरतन कम-से कम रसोईघर में छोड आए ।

लडके की नौकरी का बहाना दिखाकर सावित्री अपने बॉस सिंघानिया को घर पर आमंत्रित करती है । परंतु लडका असलियत से पूरी तरह परिचित है । उसे मालूम है, कि सावित्री इसके पहले दो बार सिंघानिया के यहाँ हो आई है । इसलिए वह इस विषय में सावित्री पर व्यंग्य करता है । सावित्री घर को अधिकार और इज्जत मिला देने की आड में भोग-विलास के खेल खेल रही है । वह एक ओर बेटे के प्रति कर्तव्य निभाने का दावा करती है, तो दूसरी ओर बच्चों के सामने पूरी तरह गिर जाती है । ` घर ` की मूल भावना का आधार वैवाहिक संबंध और दाम्पत्य प्रेम है, जिसका सावित्री में पूर्णत: अभाव है । अर्थ और काम का अतिरिक्त मोह सावित्री को बेचैन तथा चंचल बनाता है ।

जब महेंद्रनाथ सावित्री की प्रेम लीलाओंकी ओर इशारा करता है, तब वह गहरी वितृष्णा के साथ कहती है ` कितने नाशुक्रे आदमी तुम हो उससे तो मन करता है कि आज ही मैं `[२] खुद के लिए कुछ फैसला कर लूँ । पुरुषा की

---

१ आधे-अधूरे - मोहन राकेश - पृ. १३

२ - वही - पृ. २२

अकर्मण्यता को ही सावित्री घर की बरबादी का कारण मानती हैं । सावित्री पुरुष की पराधीनता और स्त्री की अधिकार भावना, प्रेम की यह विडंबना ही संघर्ष मोल लेती हैं ।` बीस साल तक महेंद्रनाथ के साथ रहने पर भी उस में कहीं समझौता न कर पाने का अहसास, ऊपर से अपने ही बच्चों के असंगत जीवन के रीतेपन का परिचायक व्यवहार सावित्री को और भी अधूरा और खोखला कर देता हैं ।`[१]

सावित्री कमाती हैं, इस का उसे गर्व हैं । उसे लगता हैं, कि महेंद्रनाथ के कारण ही घर की बरबादी हुई हैं । इसलिए वह महेंद्रनाथ को कोसती हैं - `जो दो रोटी आज मिल जाती हैं मेरी नौकरी से, वह भी न मिल पाती । लडकी भी घर में रह कर ही बूढा जाती ।`[२] लेकिन वह खुद क्या कर रही हैं, इसकी ओर वह जरा भी ध्यान नहीं देती । उल्टे रोब जमाते हुए कहती हैं -- `यहाँ पर सब लोग समझते क्या हैं मुझे ? एक मशीन, जो कि सब के लिए आटा पीस-पीस कर रात को दिन और दिन को रात करती रहती हैं ।`[३] यहाँ कमानेवाली नारी का अहंकारी रूप स्पष्ट होता हैं ।

सावित्री की ऐसी धारणा हो गई हैं, कि परिवार का सारा बोझा वही सम्हाले हुए हैं और वह बाहर जो भी कुछ करती हैं, घर के लिए ही करती हैं । वह कहती हैं, `अगर मैं कुछ खास लोगों के साथ संबंध बनाकर रखना चाहती हूँ, तो अपने लिए नहीं, तुम लोगों के लिए ।`[४] परंतु लडका उसकी इस धारणा पर जब कडा प्रहार करता हैं तब वह `कोई जरूरत नहीं किसी से भी बात करने की । आज वक्त आ गया हैं, जब खुद ही मुझे अपने लिए कोई-न-कोई फैसला...`[५]

---

१ अपने नाटकों के दायरे में - मोहन राकेश - तिलकराज शर्मा - पृ. ११९

२ आधे अधूरे - मोहन राकेश पृ. २३

३ - वही - पृ. ४७

४ - वही - पृ. ६७

५ - वही - पृ. ६१

करना होगा, यह कहकर इस घर से कट जाने का एवं अपनी जिंदगी नए सिरे से शुरू करने का निश्चय करती है और इसीलिए वह जगमोहन के पास पहुँचती है, परंतु वापस लौटती है तो उसके हाथ का लिजलिजा पसीना लेकर । ऊब, घुटन, तनाव भरी जिंदगी में सावित्री को छोटी-छोटी खुशियाँ महत्वपूर्ण लगने लगती है । इसलिए वह जगमोहन के पास उसकी खोज करती है । सावित्री एक सुविधाजनक रंगीली जिंदगी जीना चाहती है, अत: निराशा और असफलता के बीच चक्कर काटती रहती है । वह कहती है, ` मेरे करने से जो कुछ हो सकता था इस घर का, हो चुका आज तक । मेरी तरफ से अब यह अंत है उसका...[१] ` इस ` अंत ` को लानेवाली हवा को लेकर सावित्री पूरे नाटक में बार बार हमारे सामने आती है । वह अपने घरवालों से भी सहानुभूति नहीं पा सकती है ।

सावित्री हर समय काम वासना की तृप्ति के लिए तथा झूठे सुख के लालच में विभ्रांत होकर अतृप्त-सी घर के बाहर घूमती रहती है । प्रेम या सेक्स एक ऐसा तत्व है, जो स्त्री-पुरुष को अर्थपूर्ण पारस्परिक संबंध में बाँध सकता है और उसकी एक शर्त होती है - आत्मसमर्पण । इस आत्मसमर्पण का ही सावित्री में अभाव है । वह अपने नाम के ठीक विरुद्ध पति से विमुख होकर अनेक पुरुषों से संपर्क रखती है । तथा उनसे सेक्स की पूर्ति के साथ साथ अतिरिक्त धन जुटाने की व्यावहारिक बुध्दि भी रखती है। अत: वह सह-अपराधी और शिकार दोनों है । इसके लिए वह एक ` रोल ` स्वीकार करती है । अत: वह कुछ जागरूक निर्णय तो लेना चाहती है, पर तब तक बहुत विलंब हो जाता है । इसलिए वह कहीं भी नहीं जा सकती ।

मध्यवर्गीय मानसिकता का शिकार बनी हुई सावित्री जीवन में धन को अत्यंत महत्त्व देती है और उसकी प्राप्ति के लिए अपने शरीर का अस्त्र की तरह उपयोग करती है तथा स्वयं को व्यक्ति से वस्तु बना डालती है । वह मोहांधता में दूसरों से शोषित होना स्वीकार कर लेती है और यह समझाती है कि स्वयं

---

१ आधे अधूरे - मोहन राकेश - पृ. ६३

उनका शोषण कर रही हैं । इसलिए वह क्षण को स्वीकार करती हैं और उस क्षण के बीतते ही फिर नए क्षण की तलाश शुरू करती हैं । इस तरह अपने अधूरेपन को पूर्ण करने के लिए विकृत कृत्यों का सहारा लेना किसी भी परिस्थिति में श्रेयस्कर नहीं हैं । सावित्री अपने पति को नाकारा साबित करती हैं, ' आदमी होने के लिए क्या जरूरी नहीं कि, उसमें अपना एक माद्दा, अपनी एक शख्सियत हो ? .... जब से मैंने उसे जाना हैं, मैंने हर चीज के लिए किसी-न-किसी का सहारा ढूँढते पाया हैं । ... वह खुद एक पूरे आदमी का आधा चौथाई भी नहीं हैं ।' यह बात महेंद्रनाथ के साथ उसके अपने व्यक्तित्व एवं अस्तित्व के संबंध में भी सत्य हैं ।' सावित्री स्वयं आधी-अधूरी हैं । इस कोटि की आधी-अधूरी नारियों का संकेत स्ट्रिडबर्ग ने 'मिस जूली' की भूमिका में देने का प्रयत्न किया हैं । उसके अनुसार ऐसी आधी औरतें अपने को अधिकार ,यश, धन आदि के लिए पराए हाथों बेच देती हैं और कई पीढ़ियों तक त्रास और -ह्रास का कारण बनती हैं ।' [२]

सावित्री को यद्यपि पुरुष से पौरुष की माँग हैं, परंतु मनोवैज्ञानिक कारणों से वह आज्ञाकारी और दब्बू पुरुष से ब्याह करती हैं। वस्तुत: उसे अधूरे पुरुष की ही तलाश हैं और वह उसे मिलते भी हैं । इसी पौरुष की प्राप्ति के लिए ही वह अनेक पुरुषों से बँध जाती हैं । जुनेजा और सावित्री के वार्तालाप से यह बात स्पष्ट हो जाती हैं --' महेंद्रनाथ को तुम तब भी वह आदमी नहीं समझती थी, जिसके साथ तुम जिंदगी काट सकती ... पर हर दूसरे चौथे साल अपने को उससे झटक लेने की कोशिश करती हुई । इधर उधर नजर दौड़ाती हुई कि अब कोई जरिया मिल जाए, जिससे तुम अपने को उससे अलग कर सको । पहले कुछ दिन जुनेजा एक आदमी था तुम्हारे सामने .. जुनेजा के बाद जिससे कुछ दिन चकाचौंध रही तुम, वह था शिवजीत । एक बड़ी डिग्री, बड़े-बड़े शब्द और पूरी दुनिया घूमने का अनुभव । ... उसके बाद सामने आया जगमोहन ।

---

१ त आधे - अधूरे - मोहन राकेश - पृ.९७-९८

२ आधुनिक नाटक का मसीहा - मोहन राकेश - गोविंद चातक - पृ.८६

ऊँचे संबंध, जबान की मिठास, टिप-टाप रहने की आदत और खर्च की दरियादिली ।.... पर शिकायत तुम्हें उससे भी होने लगी .... तुम्हारे लिए जीने का मतलब रहा है - कितना कुछ एक साथ होकर, कितना कुछ एक साथ पाकर और कितना कुछ एक साथ ओढकर जीना । वह उतना कुछ कभी तुम्हें किसी एक जगह न मिल पाता, इसलिए जिस किसी के साथ भी जिंदगी शुरू करती, तुम हमेशा इतनी ही खाली, इतनी ही बेचैन बनी रहती ।'[१]

जुनेजा ने सही जगह पर चोट करके सावित्री की अनेक अतृप्त लालसाओं की तरफ इशारा किया है । सब कुछ एक साथ पाने की लालसा से तथा अपनी उपेक्षाओं के आधार पर दूसरों को नियंत्रित करने की इच्छा से पारिवारिक एकता भंग हो जाती है । सावित्री आवश्यकता से अधिक आक्रमक और महत्वाकांक्षिणी है । सावित्री की इस बे-सिर पैर की बहुमुखी इच्छाओं के कारण ' जिस मुठ्ठी में वह कितना कुछ एक साथ भर लेना चाहती थी, उसमें जो था वह भी धीरे धीरे बाहर फिसलता गया'[२]। ' काल्पनिक पूरेपन की तलाश में दर दर भटक कर सावित्री ने अपनी और घरवालों की भी जिंदगी तबाह कर दी है । वास्तव में यह सावित्री की ट्रैजेडी ही है । आधुनिक युग में अपने अस्तित्व की तलाश में उलझी हुई संत्रस्त नारी का ही यह यथार्थ चित्र है । ' उसके जीवन में व्दंव्द नहीं क्राइसिस है ।'[३] सावित्री का यह परपुरुषा आकर्षण और बहिर्मुखी रंग ढंग सिर्फ उसके व्यक्तित्व को ही नहीं तोडता, अपितु पूरा परिवार विशृंखल हो जाता है ।

सावित्री जिस किसी को अपने घर बुलाती है, वह उसकी किसी बडी चीज की वजह से । परिवार के जवान बच्चों पर इन बातों का बुरा असर पडता है । उनकी हीन भावना और बढती है, विद्रोह के रूप में उनके कदम और भी बहक जाते हैं । बच्चों के मन में आनेवाली हीनता उनके व्यक्तित्व को उभरने नहीं देती,

---

१ आधे - अधूरे - मोहन राकेश - पृ. १०३-१०४

२ आधुनिक नाटक का मसीहा - मोहन राकेश - डॉ. गोविंद चातक - पृ. १०५

३ - वही - पृ. ८३

यह मनोवैज्ञानिक सत्य है । सावित्री स्वकेंद्रित है, इसलिए वह केवल अपने लिए जीना चाहती है । महेंद्र के मन में वह विश्वास दिलाना चाहती है, कि उसके जीवन में सावित्री के सिवा कोई चारा नहीं है । नीत्से की विचार प्रणाली के अनुसार वह खुद से बहुत प्यार करती है, खुदका सम्मान चाहती है, जिसकी परिपूर्णता दूसरों के सहारे करना चाहती है । वास्तव में उसकी जीवन दृष्टि ही एकांगी है । उसके लिए भावना और आत्मीयता जैसे मर मिट चुके हैं । भिन्न भिन्न तरीकों को अपनाकर चालीस वर्षों की आयु होने पर भी वह अपने लिए कोई न कोई फैसला करने निकली है । परंतु उसमें वह नाकामयाब रहती है, क्योंकि समय किसी की राह नहीं देखता है । जिस जगमोहन के भरोसे वह घर छोडना चाहती है, वह उसके लिए तैयार नहीं है । हाँ, वह सावित्री से मैत्री तो रखना चाहता है, अवश्य, लेकिन पत्नी के रूप में उसे अपनाना नहीं चाहता । केवल शारीरिक निकटता आत्मिक संबंध कैसे जोड सकेगी ? वह एक बहुत भारी झटका खाकर घर की तरफ लौट आती है ।

पर-पुरुष संबंध का प्रलोभन सावित्री के जीवन का अंग बनता है, लेकिन उसकी अपनी मनःस्थिति के कारण इन संबंधों में उसे अधूरा सुख मिलता है, जिससे कि उसे लोग आधे-अधूरे लगते हैं । सत्य यह है कि मानव चेतना ही अभावग्रस्त है, जो मानव जीवन में अभाव और अधूरापन लाती है । काल्पनिक पूर्णता की चाहही अभाव को जन्म देती है तथा पूर्णता के संदर्भ में ही अपूर्णता की प्रतीति होने लगती है । अपूर्णता की कचोट, अतृप्त संवेग एवं असंतुष्ट दृष्टि को लेकर ही सावित्री महेंद्रनाथ तथा अन्य संपर्क में आए पुरुषों पर अधूरेपन का दोषारोपण करती है । लेकिन वह पुरुष को जैसा है उसी रूप में स्वीकार नहीं करती ।"[१]

एक के बाद एक अनेक पुरुषों को अपनाकर उन्हें आधा-अधूरा करार देना ही सावित्री के जीवन का तत्व बन जाता है । परंतु सचाई यह है, कि आदमी

---

१ आधुनिक नाटक का मसीहा - मोहन राकेश - गोविंद चातक - पृ.८८

कभी कोई पूरा नहीं होता - आपसी संबंधों की पूर्णता ही उसे पूरा बनाती है । यौन संबंधों की वासना और आत्मिक इच्छा शक्ति के अभाव में उसके आगे पूर्णता का अहसास कभी उभरता ही नहीं । किंतु अधूरी होकर भी दूसरों का अधूरापन देखना उसका दोष्ठा नहीं, किसी भी स्त्री के मन में यह आकांक्षा होती है कि पुरुष्ठा में उसे वह पूर्णता मिले जो स्वयं उसमें नहीं ।[१] महेंद्रनाथ आदि पुरुष्ठों में वह अपने भावों की पूर्ति नहीं पाती, अपितु वह उन्हें अधूरा कहकर लताडती है । यद्यपि सावित्री में एक प्रकार की तलाश है, परंतु वह तलाश काम वासना से ऊपर नहीं उठ सकी है । इसलिए उसे सभी पुरुष्ठा एक से दिखाई देते हैं, क्योंकि वह सब के साथ जिन संबंधों से जुडी है, उन सब के बिंदु एक ही हैं । इसीलिए अंत में वह इस नतीजे पर पहुँचती है कि -' मैंने आप से कहा है न बस । सब-के-सब ... सब - के - सब ... एक-से । बिल्कुल एक-से हैं आप लोग । अलग-अलग मुखौटे ,पर चेहरा ? - चेहरा सब का एक ही ।'[२] इससे सावित्री की न्यूनतापूर्ण दृष्टि का परिचय मिलता है । सावित्री अपनी मर्जी के अनुसार अन्य पुरुष्ठों को अपने इर्द-गिर्द घुमा न पाने की असमर्थता में पुरुष्ठा का अधूरापन देखती है । लगता है कि उसका दर्द और दर्प गहरा है ।

जुनेजा सावित्री की स्वार्थी लालसा का पर्दाफाश करते हुए कहता है कि तूने महेंद्रनाथ को इसीलिए झट से तोडा भी नहीं, बल्कि उसे टुकडे भी बना दिया है, क्योंकि' जिंदगी में और कुछ हासिल न हो तो कम-से-कम यह नामुराद मोहरा तो हाथ में बना ही रहे ।'[३]

इसी प्रकार सावित्री में भारतीय नारी के आदर्शों का पूरी तरह अभाव दिखाई देता है । वह समझौतावादी दृष्टि सावित्री में नहीं है, जो आम तौर पर भारतीय नारी में होती है । वह यथार्थ के प्रति अदम्य घृणा भाव से उत्पीडित

---

१ आधुनिक नाटक का मसीहा - मोहन राकेश - गोविंद चातक - पृ.८८

२ आधे अधूरे - मोहन राकेश पृ.१०७

३ - वही - पृ.१०८

रहती है , जिससे वह दूसरों को भी तोडती है और खुद भी टूट जाती है । सारा परिवार सहानुभूति के अभाव में टूटकर बिखर जाता है । सावित्री के रहन-सहन का भडकीलापन, व्यवहार का भद्दापन एवं अशिष्टता उसे गृहिणी की सात्विकता से वंचित कर देती है । इस प्रकार इस आधुनिक सावित्री की सामाजिक मर्यादाओं को तोडकर आगे बढना स्वस्थ परंपरा का निदर्शक नहीं है ।

" स्त्री में एकाधिकार की भावना प्रबल है और वह अपने पतिपर अधिकार के संदर्भ में अपनी आत्मा,अपनी भावनाओं,अपनी कामनाओं का गला नहीं घोंटना चाहती ।"[१] सावित्री पाश्चात्य सभ्यता के अंधानुकरण की ही उपज है । लेकिन यह पाश्चात्य जीवन धारा का अंधानुकरण भारतीय समाज के लिए घातक सिध्द हो रहा है । पाश्चात्य प्रभाव सामाजिक जीवन की अपेक्षा पारिवारिक जीवन मूल्यों को चौपट कर रहा है । फ्रायड,लॉरेन्स का अतिरेकी प्रभाव, आधुनिक नारी मुक्ति का आंदोलन, विघटनशील मूल्यों से आया नैराश्य, परिवार की बदलती व्यवस्था और असफल विवाह की घुटन आदि बातों का एकत्रित दुष्परिणाम इस नाटक में पाया जाता है । राकेश ने यहाँ अपने अस्तित्व के लिए सजग नारी के प्रश्नों को उठाया है । यहाँ सावित्री के रुप में " आधुनिक परिवेश में मध्यवर्गीय स्थितियों में निम्नमध्यवर्गीय स्थितियों की ओर अग्रसर हो रही नारी का यह एक अधिकांशत: यथार्थ चित्र एवं चरित्र है ।"[२]

अंत में सावित्री कहती है" इस घर में आना और रहना सचमुच हित में नहीं है उसके । और मुझे भी ... मुझे भी अपने पास उस मोहरे की बिल्कुल-बिल्कुल जरुरत नहीं है जो न खुद चलता है, न किसी और को चलने देता है ।"[३] यह सावित्री की व्यक्तिगत अभिव्यक्ति होकर भी जातिगत वैशिष्ट्य को अभिव्यक्त करती है । राकेश ने सावित्री में आज की परिस्थितियों से संत्रस्त, नौकरी करने के लिए विवश नारी की विडम्बनाओं का प्रभावी प्रतीक उभारा है । यहाँ नारी

१ मोहन राकेश का नाट्य साहित्य - डॉ. पुष्पा बंसल -पृ. ६२

२ आधे अधूरे समीक्षा - डॉ.राकेश शर्मा पृ. ८७

३ आधे अधूरे - मोहन राकेश पृ. [illegible]

BARR. BALASAHEB KHARDEKAR LIBRARY
SHIVAJI UNIVERSITY, KOLHAPUR.

के परंपरागत रूप, संस्कारशीलता और नैतिकता के बंधनों से टूटने का यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया गया है ।

सावित्री के प्रति राकेश की सहानुभूति थी ।[१] वह उस औरत को भावुक बिलकुल नहीं बनाना चाहते थे । कहते थे, बहुत सोचा है उस औरत ने उसकी घुटन और कडवाहट उसकी जिंदगी से उभर कर आती चाहिए ।[२] शायद आज उनके दबे हुए स्त्री व्यक्तित्व को लेकर राकेश यह प्रकट करना चाहते हो । फिर भी सावित्री का इस हद तक बढना उचित नहीं लगता ।[३] सावित्री के प्रति लेखक की गहरी सहानुभूति होते हुए भी नाटक में दोष्टा भी वही लगती है - यह दोष्टा केवल उसका क्यों ? क्या परिवेश की जडता और मानसिक हताशा के लिए सभी समान रूप से उत्तरदाई नहीं हैं ? सावित्री पत्नी, स्त्री एक ही व्यक्ति क्यों ?[२] सावित्री के रूप में राकेश की बुध्दिवादिता स्पष्ट हुई है । क्या उसका पत्नीत्व आहत नहीं था ? क्या उसको पति की ओर से एकांत समर्पण एवं पूर्ण विश्वास मिला था[३] ?[३] नहीं भी मिला हो, लेकिन उसकी भरपाई इस कदर के नैतिक पतन से हो सकेगी क्या ? आज के समाज में उसे मान्यता प्राप्त होगी क्या ? जीवन जीने का हर एक का अपना अपना ढंग है, फिर भी जिस समाज में रहना है उसकी भी कुछ कद्र रहे । नहीं तो सुरेखा की माँ जैसी अनेकों से अपमानित होना पडेगा । विकसित होनेवाले व्यक्तित्वों का भारतीय सभ्यता के अच्छाइयों से विश्वास उड जाएगा । हर तरह से यह सारी प्रक्रिया ही हानिप्रद होगी ।

बीना -- (बडी लडकी (बिन्नी) --

बीना रिक्षा का बील चुकाने के लिए पचास छुट्टे पैसे माँगती हुई पहली बार नाटक में हमारे सामने आती है । उस समय सिंघानिया के घर आने की बात

---

१ सारिका - मार्च १९७३ - सुधा शिवपुरी - पृ. ३३

२ मोहन राकेश और उनके नाटक - गिरीश रस्तोगी - पृ. ११०

३ मोहन राकेश का नाट्य साहित्य - डॉ. पुष्पा बंसल - पृ. ५२

को लेकर महेंद्रनाथ और सावित्री में झगडा शुरू था । बीना महेंद्रनाथ और सावित्री की बडी लडकी हैं । वह एक दिन सावित्री के प्रेमी मनोज के साथ घर से भाग जाती हैं । पति के साथ अनबन होने से वह बार बार माँ के घर आती रहती हैं । अब भी वह अपने पारिवारिक जीवन से ऊबकर अपना घर छोडकर मायके चली आई हैं । वह खुद एक समस्या बन कर आई हैं तथा उसके आते ही सावित्री के परिवार की समस्या का भी उद्घाटन होने लगता हैं । वह सावित्री के समान मनचली तो हैं, परंतु सावित्री के समान अनेक पुरुषों को अपनाने का अवसर उसे नहीं मिलता हैं । फिर भी सावित्री की उद्दाम कामक्रीडा देखकर उसकी भी कामवासना जाग्रत होती हैं, इसलिए वह अपने घर में आए, माँ के पूर्व प्रेमी मनोज के साथ मौका पाकर भाग जाती हैं । वह जाने अनजाने सावित्री के आदतों की शिकार हुई हैं । उसके बचपन में घर में होनेवाली अस्वाभाविक परिस्थितियों को देखकर उसका घर में ऊबना और घर से भाग जाना स्वाभाविक ही लगता हैं । घर में होनेवाले असंतोष, अविश्वास और घुटनशील माहोल के परिणाम से ही वह अपना घर त्याग कर किसी अपनेपन से और विश्वास से भरे व्यक्ति का सहारा ढूँढने के लिए भाग जाती हैं । घर के अस्वाभाविक व्यवहार से उसका मन एक प्रकार के तनाव से ग्रस्त हैं ।

सावित्री की तरह उसमें भी समझौतावादी दृष्टिकोण की कमी हैं । इसलिए वह अपने माँ की तरह अपने दांपत्य जीवन को दुहरा रही हैं । वह माँ के समान अनेक पुरुषों से संपर्क तो नहीं रखती, लेकिन उसने जिसके साथ शादी की हैं, उसे भी उसने ठीक तरह से पहचाना नहीं हैं । इसलिए वह कहती हैं शादी से पहले मुझे लगता था कि मनोज को बहुत अच्छी तरह जानती हूँ । पर अब आकर .... अब आकर लगने लगा हैं कि वह जानना बिल्कुल जानना नहीं था ।[१] इससे लगता हैं कि बीना का चुनाव गलत था । यह गलत चुनाव दोनों के बीच एक ऐसी 'हवा' निर्माण करता हैं, जिससे दोनों ही अजनबीपन महसूस करते हैं । दांपत्य जीवन के आत्मीयता के अभाव के कारण वह सिर्फ यह महसूस करती हैं कि 'दो

---

१ आधे अधूरे - मोहन राकेश - पृ. २७

आदमी जितना ज्यादा साथ रहे, एक हवा में साँस ले, उतना ही ज्यादा अपने को एक दूसरे से अजनबी महसूस करें ?`[1] वह स्वभाव से ही असंतुष्ट है । अपने परिवार में शांति बनाए रखने के लिए वह अपनी ओर से कुछ समाधान नहीं ढूँढना चाहती । वह तो कहती है`` ... मन करता है आसपास की हर चीज को तोड- फोड- डालूँ । कुछ ऐसा कर डालूँ जिससे ...[2] पति के मन को कहीं-से कहीं चोट लगे ।` किंतु धीरे धीरे हर चीज उसी ढर्रे पर लौट आती है । लौटकर फिर उसी स्थिति में आ जाना आगे की ओर न बढ़ना ही वह अधूरापन है,जो सारे परिवार की तरह उसे भी घेर लेता है ।`[3]

मनोवैज्ञानिक दृष्टि से देखने पर पता चलता है कि बीना का विकास जिस वातावरण में हुआ है, वह उसे समझौता नहीं करने देता तथा उसे स्वाभाविक भी नहीं रहने देता । वह कहती है,,कि` मैं इस घर से ही अपने अंदर कुछ ऐसी चीज लेकर गई हूँ जो किसी भी स्थिति में मुझे स्वाभाविक नहीं रहने देती ।`[4] इस` हवा` के अहसास के कारण ही वह माँ के पूर्व प्रेमी मनोज के साथ भाग जाकर बार बार अपने मायके यहाँ चली आती है ।

सावित्री के परिवार के सभी लोग एक ही उम्रवालों जैसा व्यवहार करते हैं । छोटे लोग बडे जैसा और बूढ़े युवकों जैसा व्यवहार करने लगते हैं । ऐसी हालत में माँ के स्वैर व्यवहार को देखकर ही बडी लडकी बीना माँ के प्रेमी के साथ भाग जाती है । क्योंकि वह माँ के वासनात्मक अधूरेपन का एक अधूरा अंग मात्र है ।

बीना आधुनिक परिवेश की भटकी एवं संत्रस्त पीढी की प्रतीक मात्र है । बीना का जीवन पूर्णत: निराशा और असफलताओं से,,घिरा है । एक

---

१ आधुनिक नाटक का मसीहा - मोहन राकेश - डॉ. गोविंद चातक -पृ. ३८
२ - वही - पृ. ३०
३ - वही - पृ. ९०
४ आधे अधूरे - मोहन राकेश - पृ. ३९

पीढी का अधूरा पन अगली पीढी तक विरासत के रूप में अपने आप पहुँच जाता है । मोहन राकेश जी ने इस नाटक में नई पीढी की संभ्रमावस्था का प्रामाणिक और प्रभावशाली रेखांकन किया है । कहीं कहीं उन्होंने अपने युग के आगे (आधे अधूरे) में जाने का भी प्रयत्न किया है, और यह प्रयत्न निश्चय ही एक भविष्यद्रष्टा का प्रयत्न ही है । आज का जीवन उस सीमा तक स्यात् पहुँचने लगा है । अनेक प्रकार के वैचारिक संकेत भी इसी कारण वे दे पाए हैं ।[१] गलत चुनाव की त्रासदी का आनुवंशिक चित्रण बीना तथा किन्नी द्वारा किया है ।

छोटी लडकी किन्नी --

किन्नी महेंद्रनाथ और सावित्री की छोटी लडकी तथा अशोक और बिन्नी की छोटी बहन है । वह परिपाटी बिध्द किशोरवयीन लडकी नहीं है । किन्नी नाटककार मोहन राकेश की एक यथार्थ पर आधारित मनोवैज्ञानिक सर्जना है ।[२] वह जिद्दी और दृढ है, इसलिए प्रौढता की बातें करती है । परिवार की एक-सूत्रता का अभाव उसके खिलते व्यक्तित्व को बिखेर देता है । आज की बिन्नी या किन्नी कल की सावित्री बन सकती है ।

नाटक में बडी लडकी बीना के अचानक घर आने की बात को लेकर महेंद्रनाथ और सावित्री में अनबन होती है । तर्क-वितर्क के बाद महेंद्रनाथ, सावित्री और बडी लडकी, तीनों भी चिंतामग्न अवस्था में बैठे हैं, तब उस वक्त छोडी लडकी किन्नी बाहर के दरवाजे से आती है और उन लोगों को उस तरह देखकर अचानक ठिठक जाती है । आते ही वह दलील करने लगती है, ' कुछ पता ही नहीं चलता यहाँ तो ।.... स्कूल से आओ, तो घर पर कोई भी नहीं था और अब आई हूँ, तो तुम भी हो, डैडी भी हैं, बिन्नी-दी भी हैं ... पर सब लोग ऐसे चुप क्यों हैं' जैसे ....[३]। घर आने पर घर में कोई न होने से वह बेगानापन महसूस करती है ।

---

१ अपने नाटकों के दायरे में मोहन राकेश - तिलकराज शर्मा - पृ. २५

२ आधे अधूरे - समीक्षा - डॉ. राकेश शर्मा पृ. ११२

३ - वही - पृ. ३३

परंतु घर में रहकर किसी की राह तो नहीं देखती, उल्टे जिद करती है, कि ` दूध गरम हुआ है मेरा ? ... स्कूल में भूख लगे, तो कोई पैसा नहीं होता पास में । और घर आने पर घंटा-घंटा दूध ही नहीं होता गरम ।[१] ` यहाँ निम्नमध्यवर्ग की ओर अग्रसर होनेवाले मध्यवर्गीय परिवार की आर्थिक समस्या का पर्दाफाश होता है । तथा बिखरे हुए परिवार के खोखलेपन को उजागर करती है ।

छोटी लडकी को किताबें और सिलाई क्लास के लिए रिल भी नहीं मिलता है । इस बात को लेकर जब वह माँ से शिकायत करती है, तब माँ आर्थिक तनाव के कारण सिर्फ आक्रोश ही करती रहती है । इसपर छोटी लडकी असंतोष प्रकट करती है, कि क्या वह भी अशोक की तरह पढना छोड दे। बाद में वह अपने स्कूल ड्रेस के अभाव की बात भी सुनाती है । तब मध्यवित्तीय परिवार की आर्थिक दीवार हिलती हुई नजर आती है ।

किन्नी बारह तेरह साल की छोटी लडकी है, फिर भी वह पडोस की लडकी सुरेखा के साथ कुछ अश्लील बातें करती है । वह ` छोटी उम्र में काम संबंधी चर्चा में जो रस लेती है, यह भी उसकी माँ के व्यक्तित्व का ही एक अंश लगता है ।[२] ` घुटनभरे जिंदगी में महत्वपूर्ण लगनेवाली छोटी छोटी खुशियाँ पाने के लिए ही वह कच्ची उम्र में भी सेक्स की बातें करती रहती है । सावित्री जैसी बडे स्त्रियों का युवतियों के जैसा विकृत व्यवहार देखकर तेरह बरस की उम्र में किन्नी वयस्कों की तरह सेक्स की चर्चा में आनंद लेने लगती है, क्योंकि वह सावित्री के यौन संबंधों के अधूरेपन का ही कुछ और अधूरा अंश है । किन्नी में है तीव्र आक्रोश और सेक्स की जागरूकता ।

पारिवारिक खींचातानी के कारण किन्नी माता पिता, बहन भाई, किसी के भी प्रति लगाव महसूस नहीं करती । बडों के प्रति उसमें श्रद्धा की भावना है ही नहीं । वह छोटे बडे का भी लिहाज नहीं रखती । अपनी छोटी

---

१ आधे - अधूरे - मोहन राकेश -पृ. ३३

२ आधुनिक नाटक का मसीहा - मोहन राकेश - डॉ. गोविंद चातक पृ. ८३

आवश्यक्ताओं की पूर्ति के अभाव से बेहद कडवी होकर जबान चलाती है । वह सब के साथ बेशर्मी तथा ढिठाई की बातें करती है । किन्नी एक साथ ढीठ, मुँहफट, वाचाल, स्वकेंद्रित, कृतघ्न किस्म की किशोरी बनकर उभरी है, जो मनोवैज्ञानिक दृष्टि से, वर्गीय सामाजिक दृष्टि से आज के जीवन का एक कुरूप एवं कटु यथार्थ है ।[१] यहाँ राकेशजी ने ब्यानेवाली माँ के बच्चों की दुर्दशा का कटु यथार्थ चित्रित किया है । माँ-बाप के स्वैर और स्वच्छंद बर्ताव से परिवार के बच्चे भी टूटते हैं, घुटन का अनुभव करते हैं तथा बच्चों के लिए पारिवारिक जीवन क्लेशपूर्ण एवं असहनीय बन जाता है । भारतीय सभ्यता की मान्यता है, कि उभरनेवाले बच्चों के व्यक्तित्व का विकास माँ के वात्सल्यभरे सान्निध्य से ही संभव है । अतएव बच्चों के व्यक्तित्व के विकसित करने या उन्हें बुरे पथ पर ले जाने में अधिकांशता बच्चों की माँ ही जिम्मेदार साबित होती है । माँ ही दिन-दिन भर घर से बाहर भटकती रहे, तो परिवार के बच्चे भी बिगडने लगते हैं, अजनबीपन में माँ के ही राह पर चलने का प्रयास करते रहते हैं । मोहन राकेश जी ने यहाँ बच्चों पर होनेवाले पारिवारिक परिणाम का बहुत ही प्रामाणिक और प्रभावशाली चित्रण किया है ।

किन्नी नई पीढी का विसंगत रूप व्यक्त करती है । लगता तो है वह माँ के पथ पर बिन्नी का हाथ थामें साथ देना चाहती है । वह बनने से पहले ही टूटने लगी है, जब कि परिवार के अन्य सदस्य बनने के बाद टूटते जा रहे हैं ।

-- निष्कर्ष --

यह कहा जा सकता है कि राकेशजी ने मानव जाति की नियति के कटु यथार्थ को पकडा है । वास्तव में स्त्री-पुरुष दोनों भी अधूरे हैं, परंतु दोनों एक दूसरे के पूरक भी हैं । इसलिए दोनों में लगन, प्रेम और सच्चा सहयोग होना जरूरी है, जिससे वे पूर्ण बनते हैं । परंतु सच्चे सहयोग और प्रेम के अभाव में दोनों भी आधे-

---

१ आधे अधूरे - समीक्षा - प्रो. राकेश शर्मा - पृ. ८९

अधूरे रह जाते हैं । सावित्री अपने अभाव की पूर्ति के लिए अनेक पुरुषों का हाथ तो पकड़ती है, परंतु अंत तक भूखी की भूखी ही रह जाती है । यहाँ राकेशजी ने फ्रायड तथा युंग के काम सिध्दातों के अनुसार काम कुंठा ग्रस्त सावित्री का चित्रांकन किया है । सावित्री खुद अपूर्ण होते हुए भी दूसरों में पूर्णता खोजती रहती है । उसका यह दूसरों में पूर्णता खोजने का तरीका ही खोखला है । परिवार में एक दूसरे के प्रति सहज विश्वास,आदर,अनुशासन तथा आत्मीयता रखना वास्तव में स्त्री की ही जिम्मेदारी होती है । सावित्री में उसका पूर्णत: अभाव है । उसमें अस्तु आस्था के दर्शन होते हैं । वास्तव में सावित्री और महेंद्रनाथ आकर्षण और विकर्षण के भँवर में चक्कर काट रहे हैं ।

राकेशजी ने ` आधे अधूरे में जिस युग का दिग्दर्शन किया है, वह अवसरवादिता, स्वार्थपरता,धनपद लोलुपता और अनैतिकता का युग है । वास्तव में राकेशजी ने यहाँ परंपराओं और परिवर्तित जीवन मूल्यों के संघर्ष की तीव्र झाँकी ही प्रस्तुत की है ।

राकेशजी के नाटकों में प्रेम भावना का विकासशील रूप दिखाई देता है । ` आषाढ का एक दिन` में केवल प्रेम भावना आस्था है,तो ` लहरों के राजहंस ` में प्रेम कामासक्ति का रूप लेकर आया है और` आधे अधूरे` में प्रेम अपूर्णता की घुटन में बँधा दिखाई देता है । पहले नाटक में विश्वास और समर्पण सर्वोपरि है, तो दूसरे में विश्वास की खरोंच अहं को सहती नहीं और तीसरे में तो अविश्वास ही नहीं अलगाव भी है ।

पैर तले की जमीन --

मनुष्य मात्र की जिजीविषा,अपना अस्तित्व बनाए रखने की अपूर्व छटपटाहट, अस्तित्ववादी जीवन दर्शन, शब्द और नेपथ्य की ध्वनियों का मिला-जुला प्रभाव,मूल्य विघटन, विसंगति,अर्थ की महता,मानवीय सम्बन्धों का खोखलापन, निरर्थकता,खुद को नकली मुखौटों के अन्दर छिपाकर अपना खोल बनाए रखने की वृत्ति,नारी पुरुष के टूटते सम्बन्ध, दोहरा जीवन,ऊब,आत्म घातक प्रवृत्ति आदि बातों पर आधारित मोहन राकेश के नाटक `पैर तले की जमीन` के

नारी पात्र पहले तीन नाटकों के नारी पात्रों के समान किसी प्रासाद, घर या कुटी की चार दीवारों में अपनी नियति को फेस नहीं कर रहे हैं, तो ट्रूरिस्ट क्लब ऑफ इण्डिया में इकट्ठा होकर अपने अपने अस्तित्व को बचाने के लिए जूझ रहे हैं। नाटक में नायक नायिका की कोई स्पष्ट परिकल्पना नहीं है। नाटक में सिर्फ तीन नारी पात्र हैं - सलमा - अयूब की पत्नी है, रीता और नीरा दो लडकियाँ हैं।

रीता - (गुड्डी दीदी) --

रीता नीरा की सखी है, जो गुड्डी दीदी भी कहलाती है। वह टेबल टेनिस की खिलाडी है। रीता अभिजात्य वर्ग की लडकी है, जिसने जीवन के प्रारम्भ में ही मनुष्य के भीतरी दरिन्द्रे से परिचय पाया है। अत: वह क्रिस्तान बन चुकी है। वह अपने अस्तित्व और स्वतंत्रता के प्रति सजग है। अयूब ने उसका हाथ पडक कर उसके साथ कुछ कमीनी हरकत की थी, तो अयूब को उसने सब के सामने पीटा था। लेकिन पुल टूटने से अस्तित्व का संकट चारों ओर से घिर जाता है, तब वह एकांत में अयूब के साथ दोहरी मन:स्थिति में जीती है। कल अयूब को दुत्कारनेवाली रीता आज परिस्थिति से लाचार बन जाती है। वह कहती है कि, " बडी ममी अक्सर कहा करती है, कि भीड में आदमी आदमी होता है, और अकेले में ... पर मैं ने क्या हमेशा इस बात का मजाक नहीं उडाया है ?"[१] परन्तु आज जब यथार्थ उभर आया है, तो उसके होश हवास उड जाते हैं। वह एक ओर तो पुरुष का शारीरिक साथ भी चाहती है और दूसरी ओर पुरुष से छुटकारा पाकर अपना स्वतंत्र अस्तित्व बनाए रखना चाहती है। यहाँ उसकी प्रकृत भूख यथार्थ के रूप में उभरती है। उसका मन सब कुछ अपनाना चाहता है। एक बार उन सब में होकर जीना चाहता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि जब मनुष्य के मन में अपने अस्तित्व के सम्बन्ध में सन्देह निर्माण होता है तब वह नीति, धर्म, कुलाचार सब भूल जाता है और उसके पास केवल एकमात्र तीव्र तमन्ना रहती है, अपनी भूख, चाह मिटाने

---

१ पैर तले की जमीन - मोहन राकेश पृ. ६२

की ।` मैं उसे अपने से परे हटा रही थी और वह जानवर उसे अपने पास बुलाना चाह रहा था । वह चाह रहा था कि मरने से पहले एक बार ... चाहे .... कुछ भी हो ।... सिर्फ एक बार....`[1] यहाँ यह दिखाई देता है, कि हर व्यक्ति में एक जानवर विद्यमान रहता है । जो अवसर मिलने पर अपना असली रूप धारण करता है । इस प्रकार रीता अतृप्तियों और सन्त्रास को भोग रही है ।

वास्तविकता और असलियत को स्वीकारने की रीता में हिम्मत है, ` तुम सब लोग झूठे हो । खोखले हो । अपने को झूठी आशा और खोखले विश्वास में रखकर जी सकते हो ।`[2] मनुष्य में होनेवाली पशु-वृत्ति तथा दुनिया के बुरे अनुभवों से वह पूरी तरह परिचित है, इसलिए अपनी सखी नीरा से कहती है, ` मैं मुन्नो यहाँ जानवरों के बीच अकेला नहीं छोड सकती ...`[3]

इस प्रकार नीरा वर्तमान युग की, अतृप्तियों और संत्रास से भरी, दुनियादारी से पूर्ण परिचित, कब्रिस्तान बनी, अपने अस्तित्व और स्वतंत्रता के प्रति सजग नारी है ।

-- नीरा --

रीता की तरह नीरा भी जीवन के प्रारम्भ में ही मनुष्य के भीतरी दरिंदे के प्रति पूर्ण परिचित है, इसलिए वह कब्रिस्तान बन चुकी है । वह एक अभिजात्य वर्ग की लडकी है तथा रीता की सखी और टेबल टेनिस की अल्पवयस्क खिलाडी है । वह अपना अस्तित्व सदैव बनाए रखना चाहती है । वह तेरह-चौदह साल की लडकी है । वह अपने वर्तमान जीवन से ऊब कर क्लब में टेनिस खेलने के लिए तथा नहाने के लिए आती है और नकली मुखौटा धारण कर अपने संत्रास भरे वर्तमान जीवन को भूलना चाहती है । वह ` एक गिलास पानी ` कहती हुई नाटक में पहली बार प्रवेश करती है । वह अन्त तक रीता का साथ देती है । वह तेरह - चौदह साल की किशोरी है, लेकिन ` छोटी ` कहने से चिढ जाती है । वह छोटी है इसलिए छोटी मोटी बातों पर भी चिढ जाती है । अत: वह दुनिया की प्रखर वास्तविकता सहने के काबिल नहीं है ।

---

१ पैर तले की जमीन - मोहन राकेश - पृ. ८४
२ - वही - पृ. १०५
३ - वही - पृ. ८४

-- सलमा --

सलमा अयूब की पत्नी है । वह अयूब से केवल वैवाहिक बन्धन से जुडी हुई है, मानसिक स्तर पर वह उससे जुडी नहीं है । वह अयूब के साथ वैवाहिक संबंध के बोझ को वर्षों से ढो रही है । शादी से पहले कोई एक डॉक्टर सलमा का दोस्त था, यह बात अयूब भी जानता है, इसलिए वह बार बार ताने कस्ता है, `कुछ रिश्ते खराब थे । मेरे और मेरी बीवी के.... हमें कुछ गहरी बातें डॉक्टर से करनी थी । डॉक्टर मेरी बीवी का बचपन का दोस्त है .. अब समझे कुछ तुम[१] ?` अयूब सलमा को हिचकोले खाते पुल से डॉक्टर से मिलने इस पार ले आया है । यह संबंधों की उलझने दोनों को कब्रिस्तान बना देती है । दोनों की समझ में यह नहीं आता, कि` या तो तीलियों में आग नहीं रही, या शायद अपने में ही खिंचने का दम नहीं रहा ।`[२] एक दूसरे के बीच `शक` का भाव पैदा होने से ही उनमें कब्रिस्तान का अहसास होने लगता है ।` औरत कब्रिस्तान क्यों बन जाती है ? .... इसके लिए सभी के अलग-अलग कारण हो सकते हैं । एक कारण आदमी और औरत में उत्पन्न होने वाला संशय का भाव और तब इस बारे में शिद्दत में सोचने का भाव भी हो सक्ता है । तब आदमी का टूटना गिलास का टूटना एक जैसा बन जाता है और अयूब के लिए सलमा का अस्तित्व कुछ इसी प्रकार का बन कर रह गया है ।`[३] मियाँ बीवी के रिश्तों के बीच अगर कोई छाया भी आ जाए, तो उसका नतीजा व्यक्ति को खुदकुशी की सीमा तक ले जाता है ।` मेरी बीवी को मुझसे पिण्ड छुडाने का यही एक रास्ता नजर आता है ।`[४] नारी के लिए यह एक विवशता है, क्योंकि अनचाहे व्यक्ति से छुटकारा पाकर नारी अपना स्वतंत्र जीवन जी नहीं सक्ती । उसके सामने केवल दो ही रास्ते बचे रहते हैं -- चुपचाप सहते रहना या खुदकुशी । आज समाज में ज्यादातर नारियों की यही

---

१ पैर तले की जमीन - मोहन राकेश - पृ. ४१

२ - वही - पृ. ४४

३ अपने नाटकों के दायरे में मोहन राकेश - तिलकराज शर्मा पृ. १४९

४ पैर तले की जमीन - मोहन राकेश पृ. ४७

सच्ची हालत है । उनके जीवन में चारों तरफ विसंगति फैली हुई दिखाई देती है । ` वास्तविक सत्य वह नहीं है जो बाहर घटित हो रहा है, वास्तविक तो वह है जो अपने भीतर घटित, हो रहा है -- यानी जो पुल भीतर ही भीतर चरमरा रहा है, जो मानसिकता भीतर ही भीतर बदली हुई होकर सभी कुछ बहा-डुबो देना चाहती है -- वही वास्तविकता है ।[1] ` सलमा के द्वारा नारी का पीडित अन्तस स्पष्ट हुआ है । वह कहती है, ` जब मुसीबत आती है तो सब अकेले हो जाते हैं.... मुसीबत की शक्लें अलग अलग हो सकती हैं । छुटकारा इतना आसान तो नहीं है ।`[2] लेखक ने इस नाटक में सलमा के माध्यम से सदियों से नारी की हो रही वंचनाओं का, उसपर होनेवाले बन्धनों के दबाव का स्पष्ट निर्देश किया है ।

` मुझे तुम हमेशा चहरों को लेकर शर्मिंदा कर सकते हो ... खुद भी अगर शर्मिन्दा हो सकते तो शायद हम एक दूसरे के चेहरों को ज्यादा पहचान पाते ....[3]` पुरुष का ` अहं ` चिराग तले अंधेरा ` जैसा होता है । क्योंकि पुरुष अपनी वास्तविकता हमेशा के लिए नकारता हुआ आया है । इस तरह जिन्दगी बेमेल है, अत: वह सच्चे अर्थ में जी नहीं जाती । ` आदमी हो या औरत इन्नोसेन्स का आवरण जब रह जाता है तो दोनों ही अपने ही भीतर दफन होकर रह जाते हैं और दफन होकर रह जाना एक जिन्दगी तो हो सकती है, जीना नहीं हो सकता[4] ।` वास्तविकता तो यह है कि सलमा ने अयूब को अपना सब कुछ दिया, फिर भी उसे कुछ नहीं मिला । उसका जीवन विसंगत और विडम्बनात्मक बन जाता है । अस्तित्व की अनिश्चितता में एक दूसरे को जान लेना जीते रहने से ज्यादा जरूरी लगता है ।

-- निष्कर्ष --

यह कहा जा सकता है कि, ` सलमा, रीता और नीरा तीन नारियाँ नारी जीवन के तीन चरणों को अभिव्यक्त करती हैं ।` ... नीरा एक चौदह

---

१ अपने नाटकों के दायरे में - मोहन राकेश - तिलकराज शर्मा - पृ.१४४
२ पैर तले की जमीन - मोहन राकेश पृ.६७
३ - वही - पृ.६८
४ अपने नाटकों के दायरे में मोहन राकेश - तिलकराज शर्मा - पृ.१४६

वर्षीय 'इन्नोसेन्स' बालिका है, जिसकी 'इनोसेन्स' के साथ खेलकर पिपासु पुरुष अपने अन्दर की पिपासा मिटाना चाहता है । रीता वह युवती है जो अपने अन्दर के जानवर एवं पुरुष के अन्दर के जानवर के संघर्ष से त्रस्त है और सलमा वह विवाहिता है, जो भरे पुरे घर में रहकर भी पता नहीं क्यों अन्दर ही अन्दर कब्रिस्तान में बदलती जा रही है ।'[१] ये पात्र कम विश्वसनीय लगते हैं, परंतु फिर भी अपनी अपनी रेखाएँ स्पष्ट कर देते हैं । सलमा की विरक्ति किसी से बन्धन पाने में निहित है ।' अयूब और सलमा का वैवाहिक सम्बन्धों के बोझ को ढोता जीवन, वर्षों से स्थापित उस वैवाहिक संस्था की निरर्थकता को दिखाता है, जो व्यक्ति के जीवन का आधार मानी गई है ।'[२]

मोहन राकेश के नाटकों के नारी पात्रों के संबंध में यह कहा जा सकता है, कि नारी मन की पीडाओं का दस्तावेज है - मोहन राकेश का नाट्य साहित्य ।'[३] सभी नारी पात्रों में निराशा की मानसिकता समान रूप से दृष्टिगोचर होती है । नियति से प्राप्त अधूरापन हो या अपने ही मन का अधूरापन हो, परंतु सभी नारी पात्रों में अधूरेपन की पहचान पाई जाती है । राकेश को अभिप्रेत नारी अन्त में पुरुषों की सारी निराशा और असफलता का सारा भार खुद ढोती हुई दिखाई देती है । वह पुरुष को न अपना सकती है और न छोड भी सकती है तथा विवश और पराजित-सी रह जाती है ।

मल्लिका, सुन्दरी, सावित्री, और सलमा जीवन दृष्टि की अपनी विशिष्टता को लिए हुए जीती है, जो अस्वाभाविक तथा आरोपित नहीं लगती । राकेश के सभी नाटकों में स्त्री-पुरुष के स्वस्थ सम्बन्धोंपर आधारित घर की तलाश दृष्टिगोचर होती है । यह कहा जा सकता है, कि राकेश के नाटकों के नायक घर की तरफ लौटने के लिए अभिशाप्त है । नायकों के साथ साथ नायिकाएँ भी अपना

---

१ मोहन राकेश का नाट्य साहित्य - डॉ. पुष्पा बंसल - पृ. ७०

२ विशेष सन्दर्भ में - डॉ. रीता कुमार - पृ. ३१८

३ मोहन राकेश का नाट्य साहित्य - डॉ. पुष्पा बंसल - पृ. ८४

घर चाहती हैं । मल्लिका कालिदास के साथ घर बसाना चाहती है, सुन्दरी नन्द को अपने साथ चाहती है और सावित्री को भी अपना घर उभारने की धुन लगी हुई है । परंतु निराशा और वास्तविकता की कटुवाहट इस बनने न बनने के सिलसिले में नायिकाओं को तोडकर रखती है ।

'लहरों के राजहंस' की सुन्दरी और 'आधे-अधूरे' की सावित्री पुरुषा पर हावी है, तो 'आषाढ का एक दिन' की 'मल्लिका' विवाहबाह्य प्रेम करती है और 'पैर तले की जमीन' की 'सलमा' के लिए वैवाहिक बन्धन एक विवशता है वह कब्रिस्तान बनी हुई है । इस तरह राकेश को अभिप्रेत नारी परम्परागत आदर्श नारी का बिम्ब ठुकरा देती है और स्वाभाविकता एवं यथार्थ को अपनाती है । यह यथार्थ इतना प्रखर है, कि राकेशजी पर 'जीवन को जीने के लिए एक उच्चतर आस्था भी है जिसका आभास राकेश के नाटक नहीं दे पाते'[१] या राकेश 'व्यक्ति की -हासोन्मुखी प्रवृत्तिको ही चित्रित करते हैं'[२] जैसे आरोप लगाए जाते है । परंतु राकेश ने नारी पात्रों के अन्तर्विरोध को गहराई से पकडा है । 'राकेश ने पुरुषा को नारी पर आश्रित रखा है, पर पुरुषा नारी को एक आन्तरिक आवश्यकता के रूप में कभी प्राप्त नहीं कर पाता । नारी आमादा दिखाई देती है और पुरुषा उसे झेलता है, मुक्ति चाहकर भी उससे मुक्त नहीं हो पाता ।'[३]

मल्लिका सुन्दरी और सावित्री में काफी साम्य दिखाई देता है । नारी अपने जीवन संघर्ष से पराजित होकर अपने अधूरे अस्तित्व को किसी तरह निभा रही है । कालिदास मल्लिका की उपेक्षा करता है इसलिए वह बाहरसे तो टूटती है, परंतु अन्दर से अदम्य आस्था उसे बनाए रखती है । सुन्दरी,लगता है,बाहर से तो टूटी नहीं, लेकिन अन्दरसे क्षत-विक्षत हो गई है, तो सावित्री अन्दर और

१ आधुनिक नाटक का मसीहा - मोहन राकेश - डॉ.गोविंद चातक -पृ.१०६
२ - वही - - पृ.११०
३ - वही - पृ.१३३

बाहर भी एकतानता चाहती है । सावित्री भी टूटती है, लेकिन उसमें उससे उबरने की चाह बनी हुई है । मल्लिका, सुन्दरी और सावित्री को भी अपने अपने आराध्य की अन्वरत प्रतीक्षा है, परंतु सफलता किसी के हाथ नहीं आती । मल्लिका और सुन्दरी में आन्तरिक संघर्ष है तो सावित्री में मुखरता ज्यादा है । मल्लिका कालिदास की अस्थिरता से पीडित है और विलोभ को समर्पित होकर बस जीती रहती है । सुन्दरी को अपने रूप यौवन पर गर्व है और वह पुरुष को बाँध रखने के अहम् से पीडित है, परंतु अन्तमें असफल ठहरती है । सावित्री आत्मबोध के अहं से पीडित है तथा अनेक पर पुरुषों के आगे समर्पित होने के लिए विवश है ।

` राकेश पुरुष के चितेरे है । जिस प्रकार जैनेंद्र नारी के, प्रेमचंद समाज के , प्रसाद इतिहास के और अश्क निम्न मध्यवर्ग के चितेरे है, उसी प्रकार मोहन राकेश पुरुष के चितेरे है । नारी उनके निकट पुरुष के समकक्ष एक प्राणी न होकर पुरुष का एक उपादान, एक उपकरण है ।[१] ` लेकिन राकेशजी खुद कहते थे ` किसी दूसरे को उपादान के रूप में कभी मत ग्रहण करो । पुरुष हो, भावना हो, या पत्थर अपने से बाहर उसके स्वतंत्र अस्तित्व को स्वीकारो `[२] तो नारी उनके लिए एक उपादान न होकर जितना चाहे उतना रिस्पान्स न मिलने की व्यथा है । इसलिए उनके साहित्य में सम्बन्धित नारियों को लेकर एक पुरुष की व्यथा उभर आई है । राकेश का जबरदस्त ` इगो ` हर जगह मौजूद है । इस अहं को परिस्थितियों से, रिश्तेदारों से, पत्नियों से चिढाया गया, तो उसी के संदर्भ में एक कुण्ठा प्रकट हुई ।

मोहन राकेश के नाटकों द्वारा नारी जीवन की समस्त विडम्बनाओंका लेखा-जोखा मिल जाता है । नारी पात्र पुरुष पात्रों के निर्णयों से आच्छादित है । मल्लिका जिन्दगीभर सारे दु:खों को सहती है, फिर भी अन्त में अपने प्रेमी कालिदास की ओर से अस्वीकृत होती है । अपने विश्वास को ठेस लगने से सुन्दरी टूट जाती है । सावित्री अपने प्रयत्नों में असफल, टूटे-हारे मन से किसी तरह

---

१ मोहन राकेश का नाट्य साहित्य - डॉ. पुष्पा बंसल - पृ. ८१

२ सारिका - मार्च १९७३ पृ. ६१

जिन्दगी को ढो रही हैं, तो सलमा पति की अतिरिक्त हरकतों से कब्रिस्तान बन गई हैं । इस प्रकार यह दिखाई देता हैं, कि नारी का जीवन हर परिस्थिति में एक असफलता मात्र हैं । `आधे अधूरे` की किन्नी और `पैर तले की जमीन` की नीरा, दोनों भी तेरह वर्षीय किशोरियाँ हैं, जो कच्ची उम्र में भी बडप्पन का अहसास जतला रही हैं। असमय जीवन की बुरी बातों को 'पेनस' करने की उनकी वृत्ति ही उन्हें जीवन में असफल और निराश कर देती हैं । राकेश के नाटकों के नारी पात्रों में मंझिल दर मंझिल आधुनिकता की ओर बढती प्रवृत्ति दिखाई देती हैं। मल्लिका खिन्न हैं और उसके जीवन में आस्था को अद्वितीय स्थान हैं । वह इतनी भावुक हैं कि उसमें पुरुषा के प्रति या परिस्थिति के प्रति शिकायत का कोई नाम भी नहीं, `स्व` की पहचान तक नहीं । उसमें केवल अनन्यतम विश्वास और समर्पण का भाव हैं । मल्लिका की अगली कडी सुन्दरी हैं । रूप गर्विता सुन्दरी में आस्था हैं, लेकिन उसका कुछ मूल्य हैं । वह अपने `अहं` की तुष्टि के उपादान के रूप में नन्द को स्वीकार करती हैं । और अपने `अहं` को ठेस लगते ही वह क्षत-विक्षत हो जाती हैं । वह अपने असफल विश्वास के खातिर टूटती हैं, किसी दूसरे के लिए नहीं । सावित्री में चरमोत्कर्षा की सीढी दिखाई देती हैं । उसमें आस्था की जगह अनास्था हैं । वह पुरुषा को अपने से श्रेष्ठ तो नहीं समझाती, अपने समान भी नहीं समझाती, बल्कि अपने से हेय समझाती हैं । वह पुरुषा को अपने रास्ते का रोडा समझाती हैं । आज समाज में आम तौर पर आधुनिक नारी की यह स्थिति दिखाई देती हैं कि वह सावित्री के समान ही नैतिकता और पवित्रता की ओर से आँखें मूँद कर केवल इच्छापूर्ति चाहने लगी हैं । लेकिन हर एक के इच्छापूर्ति की चाह मिटाने के तौर तरीके भिन्न भिन्न हो सकते हैं । `पैर तले की जमीन` की सलमा में चरमोत्कर्षा का उतार दिखाई देता हैं । उसमें केवल तटस्थता हैं । वह सावित्री की तरह भयानक महत्वाकांक्षा में बर्बाद भी नहीं होना चाहती और मल्लिका के समान मात्र समर्पण करके खुद को मिटाना भी नहीं चाहती । पति से भावनात्मक स्तर पर बन्ध जाने की आशा से उसकी तटस्थता भंग हो जाती हैं । `आषाढ का एक दिन` की मल्लिका और `आधे अधूरे` की बीना में कुछ बातों में साम्य दिखाई देता हैं । उनका कहना हैं, कि जिंदगी में स्थूल आवश्यकताओं की पूर्ति ही

सब कुछ नहीं है तो उसके सिवा और भी कुछ होता है, नहीं तो जिंदगी कटती है हर आदमी की किसी तरह, आज तक तो वैसी ही कटी है । आगे भी कट जाएगी । जिंदगी में यदि प्रेम या भावना का कोई स्थान नहीं है, तो वह जिन्दगी निरर्थक है । इससे लगता है, कि जिंदगी की निरर्थकता के सम्बन्ध में दोनों के विचार एक ही है ।

राकेश जी नारी से समझौता, अपनापन और कुछ हद तक समर्पण भी चाहते हैं । वे किसी चीज को अतिरिक्त महत्व देकर नारी की बर्बादी नहीं चाहते, तो नारी के `स्व` का पूरी तरहसे खयाल रख कर उसमे समझौते का या अपनेपन का समाधान चाहते हैं ।

`आषाढ का एक दिन` की मल्लिका और `लहरों के राजहंस` की सुन्दरी शुरुन शुरुन में नाटक पर हावी रही हैं और नाटक के अन्त में अपने अन्तस में कहीं टूट कर अपनी नियति को मात्र नकारात्मक रूप में भोग रही है । `आधे अधूरे` की सावित्री अपने मन में विश्रान्ता की कसक लिए हुए है, जिससे वह न आगे बढ रही है और न पीछे आ रही है । असुविधा में सुविधा भोगने की मानसिक शारीरिक कसक उसमें है, अवश्य, लेकिन उसे ठीक राह नहीं मिल रही है । वह केवल आधुनिक जीवन की मात्र विडम्बना बन कर रह जाती है । `पैर तले की जमीन` के नारी पात्र अस्तित्व की अनिश्चितता के क्षणों में अपनी अपनी वास्तविक मानसिकता की विवशता को ढोकर जीते है । सावित्री और सलमा में भी सही गलत के चुनाव का द्वन्द्व दिखाई देता है ।

अण्डे के छिलके अन्य एकांकी तथा बीज-नाटक -

अण्डे के छिलके --

पारिवारिक जीवन पर आधारित इस एकांकी में कुल नारी पात्र तीन हैं - वीना, राधा और जमुना, जो क्रमश: पुरानी, मध्य और नई पीढी का प्रतिनिधित्व करती है । जमुना सास है, जो परिवार में विधि-निषेध, धार्मिकता,

पवित्रता आदि बातों का ख्याल रखती है । वह रामायणी संस्कृति की पोषाक है और वधुओं से वह वैसी ही अपेक्षाएँ रखती है । बडी बहू राधा पर इस बात का बहुत बडा प्रभाव है, फिर भी वह चोरी छुपे `चन्द्रकान्ता` और `चन्द्रकान्ता सन्तति` जैसे उपन्यास पढती है । वह सास का मन रखना भी चाहती है और आधुनिकता की ओर आकर्षित भी होती है । उसमें नए पुराने के बीच अॅडजेस्ट करने की समझ है । नई पीढी की प्रतिनिधि वीना किसीसे दबे छुपे रहना नहीं चाहती । किसी से बिना परदा किए वह अण्डे खाने में हिचकिचाती नहीं । आज समाज में नकली मुखौटे पहनकर लोग जीते हैं । मानसिक स्तर पर सब समान होते हैं, पर प्रकट रूप में बन्धनों को तोडने का साहस किसी में नहीं होता है। इस तरह बुजुर्गों का खोखलापन उजागर होने लगा है । लोग तो चाहते हैं मूल्य टूटे , पर टूटन की आवाज न हो ।`[१] इस एकांकी में मिथ्या विश्वास एवं यथा - स्थितिवादी परिवार के पाखण्डपूर्ण वातावरण का चित्र प्रस्तुत करके मोहन राकेश ने बुर्जुवा मान्यताओं के खोखलेपन को हमारे सामने रखा है ।`[२]

बुजुर्गों के प्रति और नए के प्रति भी प्यार होने से राधा का जीवन दोहरा बना है । वीना राधा का साथ तो निभाती है अवश्य, पर वह बगावत कर उठती है,` तुम लोगों की यह बात मेरी समझ में बिल्कुल नहीं आती । उधर जाना ही है तो उसमें छिपाने की क्या बात है । सबके सामने आओ .... और अण्डे में जीव कहाँ होता है ? जैसे दूध वैसे अण्डा ।`[३] वीना की आधुनिकता की ओर रुचि दिखाई देती है, मुखौटा पहन कर जीना उसे पसंद नहीं है । लेकिन घरवाले उसे चुप कराते हैं । दिन-प्रति-दिन ध्वस्त होती हुई मान्यताओं को देखकर भी पुरानी पीढी की जान की प्रकट रूप में कुछ भी नहीं कहती है । घर में उसकी उपेक्षा शुरू है,` आज दो घंटे से मेरे कमरे की छत्त रही है । मैंने कितनी बार कहा

---

१ अपने नाटकों के दायरे में मोहन राकेश - तिलकराज शर्मा - पृ.१८५

२ मोहन राकेश के नाटक - डॉ. विजराम यादव पृ.१७७

३ अण्डे के छिलके अन्य एकांकी तथा बीज-नाटक- मोहन राकेश पृ.११

था कि लिपाई करा दो, नहीं तो बरसात में तक्लीफ होगी । मगर मेरी बात को तुम सब लोग सुनी अनसुनी कर देते हो । कुछ भी कहूँ, बस हाँ माँ, कल करा देंगी माँ, कह कर टाल देते हो ।'[१] इस तरह न चाहते हुए भी नए पुराने के बीच का फैसला बढ रहा है । परन्तु विवशता से क्यों न हो, सब एक दूसरे से जुडे रहते हैं । इससे यह स्पष्ट होता है कि बदलते परिवेश के साथ मूल्यों में परिवर्तन तो आ ही रहा है, परन्तु यथार्थ तथा मानवीय संवेदना को पूरी तरह जानने की कोशिश नए पुराने दोनों तरफ से आवश्यक है ।

सिपाही की माँ --

इस एकांकी में बिशनी, मुन्नी, कुन्ती, लडकी-१, और लडकी -२, आदि पाँच नारी पात्र है । बिशनी एक फौजी सिपाही की माँ है । आर्थिक दबाओं की विवशता से वह अपने बेटे को लडाई में भेजती है । परन्तु जिस बेटे की चिठ्ठी हर पन्द्रहवें रोज को नियमित रूप से आती थी, उसकी दो महिने में एक भी चिठ्ठी नहीं आई है । इसलिए असहाय माँ बिशनी व्याकुल होती है । माँ के हृदय की पीडा, आतुरता, भय, छटपटाहट बिशनी के एक वाक्य से प्रकट होती है, ' इतनी भी फुरसत नहीं मिलती, कि माँ को चार हरफ लिखकर डाल दे ? उसे यह नहीं पता कि मेरी चिठ्ठी जाती है, तो माँ के कलेजे में जान पडती है । माँ के कौन दो चार है जिनके सहारे वह परान लेकर बैठी रहेगी ?'[२] यहाँ माँ की आकुलाहट स्पष्ट होती है । उसे आर्थिक विवंचना तो है ही, पर साथ-ही-साथ लडकी मुन्नी की भी चिन्ता है, क्योंकि अब वह बडी हो गई है, उसकी शादी का सवाल मुँह बाएँ सामने खडा है । बिरादरी या समाज के सब मजा देखने के लिए है, सहारा किसी से भी नहीं मिलता । बेटा तो देश की जिम्मेदारी निभा रहा है, पर उसके पीछे उसकी असहाय माँ की जिम्मेदारी कौन निभाएगा ? इस तरह कठीन परिस्थिति में देशभक्ति, मानवीयता, सहिष्णुता, सहयोग,

---

१ अण्डे के छिलके अन्य एकांकी तथा बीज-नाटक - मोहन राकेश -पृ. २१-२२

२ - वही - पृ. ३२

राष्ट्रीयता आदि सभी मूल्या निरर्थक लगते हैं तथा उनपर का विश्वास उड जाता है । इस तरह इस एकांकी में ममता की गहराई तथा युध्द से उत्पन्न पीडा का यथार्थ प्रकट होता है । इसमें युध्द की विभीषिका की पृष्ठभूमि में एक परम्परावादी माँ का वात्सल्य भाव ही प्रधान है । मुन्नी और कुन्ती सिर्फ कथा वस्तु को आगे बढाने का काम करती हैं । लडकी-१,लडकी-२ के वार्तालाप से युध्द की विभीषिका पर प्रकाश पडता है ।

प्यालियाँ टूटती हैं --

यह एकांकी टूटते हुए मानवीय सम्बन्धों को तथा बढती हुई कृत्रिमता को पेश करता है, जिसमें माधुरी, मीरा,पम्मी आदि तीन नारी पात्र हैं ।

घर में एक के बाद एक प्यालियाँ टूटती रहती हैं, जिससे माधुरी आशंकित होती है । उसे इस तरह प्यालियों का टूटना अच्छा नहीं लगता । वह कहती है, `जब एक के बाद एक इस तरह प्यालियाँ टूटती हैं,तो जरूर कोई-न-कोई अनिष्ट होता है ।`[१] लेकिन मीरा को इसमें विशेषता कुछ लगता ही नहीं । वह तो कहती है, `पुरानी चीज तबाह हो,तभी तो नई आती है । नया आ जाएगा ।`[२] पुराने का नष्ट होना और नए का निर्माण होना यह तो सृष्टि का नियम ही है । पुराने सम्बन्ध अब अयाचित - से लग रहे हैं । इस लिए अपनापन लेकर दीवानचंद आत्मिक रिश्तों के स्तर पर टूट जाता है और आधुनिकता का मुखौटा धारण कर आई मिसेज मेहता अपने नकलीपन के सहारे नए रिश्तों में जुड जाती है । इस तरह सम्बन्धों की सघनता,आत्मीयता चरमराकर टूट रही है ।

आधुनिकता की धुन माधुरी पर सवार है, पर हीनता के कारण उसमें आत्मविश्वास की कमी है । आधुनिक परिवेश में स्वयं को फिट करने के लिए माधुरी हर रोज किसी-न-किसी को चाय पर बुलाती है । नखरेवाली मिसेज मेहता को भी वह चाय पर बुलाती है, परंतु उसमें अधूरेपन की भावना दिखाई देती है । इस तरह

---

१ अण्डे के छिलके अन्य एकांकी तथा बीच नाटक - मोहन राकेश - पृ.५१

२ - वही - पृ.५१

माधुरी 'आधे-अधूरे' की सावित्री की याद दिलाती है । सावित्री की तरह उसे भी सभी जगह अपूर्णता का भाव ही नजर आता है । मीरा कहती है - 'तुम्हें तो खामखाह का कॉम्प्लेक्स है, दीदी । अपनी अच्छी से अच्छी चीज पर भी तुम्हें भरोसा नहीं होता'[1] उच्च समाज में होनेवाली नारी की स्थिति का यथार्थ चित्र राकेश ने यहाँ खींचा है । 'मीरा द्वारा बार-बार पत्रिका के पन्नों में खो जाना उस मानसिकता का प्रतीक एवं परिचायक है कि जो सम्बन्धों को लेकर उठनेवाले समस्त द्वन्द्व को पीया निगल चुका है, जब कि माधुरी की मानसिकता में वह अभी तक बना हुआ है ।'[2]

कृत्रिम मान्यता के लिए तैयार होते होते माधुरी अपने वर्तमान को अधिक सार्थक और संलग्न बनाना चाहती है । दीवानचंद ने अपनी जान खतरे में डाल कर खुद का कमाया सब पैसा बहा कर माधुरी एवं उसके परिवार को बचाया था, लेकिन माधुरी को उनका घण्टा भर के लिए आना अपने बने बनाए प्रोग्रॅम में बाधा महसूस होती है । माधुरी प्यालियाँ टूटने के अपशकुन का सम्बन्ध दीवानचंद के बाधा बनकर आने से जोडती है । माधुरी को उन्हें देखकर घिनौनी-सी सिहरन होती है । वह दीवानचंद की घृणा करती है । उन्हें जली कटी सुनाती है । माधुरी का यह व्यवहार मनुष्यता के समीप नहीं लगता । वास्तव में नारी के हृदय में प्यार का, ममता, का स्रोत हमेशा के लिए बहता रहता है, वर्तमान समाज की ये प्रतिष्ठित नारियाँ किस दिशा में आगे बढ रही हैं कौन जाने ? दीवानचंद के जाने के बाद 'ग्रह तो टल गया' कहना निर्दयता की चरमसीमा लगती है । सच्चा यथार्थ तो यह है, कि आत्मीय सम्बन्धों की एक प्याली माधुरी के हाथों से टूटकर चकनाचूर हो गई है । 'प्यालियाँ टूटने का जो क्रम इस परिवार में है वहीं क्रम पारिवारिक सम्बन्धों के टूटने का भी है । समाज की इस भयंकर बीमारी की डाइग्नोसिस मोहन राकेश ने की है ।'[3] इस प्रकार समाज में होनेवाले परिवर्तन को लेखक ने यहाँ सच्चे अर्थों में प्रस्तुत किया है ।

---

१ अण्डे के छिलके अन्य एकांकी तथा बीज नाटक - मोहन राकेश - पृ.५५

२ अपने नाटकों के दायरे में मोहन राकेश - तिलकराज शर्मा - पृ.१९२

३ अण्डे के छिलके अन्य एकांकी तथा बीज नाटक - मोहन राकेश - पृ.११०

शायद --

`शायद` में पति-पत्नी के बीच का वार्तालाप, जीवन की ऊब, असंतुष्टता का संकेत देता है । उसमें स्त्री एक ही नारी पात्र है । इस एकांकी में पुरुष अर्थात् स्त्री का पति जीवन के प्रति घुटन, ऊब, संत्रास, तनाव के कारण छटपटा रहा है । और स्त्री उसे उससे संभलने के लिए कह रही है । इधर स्त्री भी निभाव की विवशता ढो रही है । केवल सोचने से क्या होगा ? केवल सोचने से कुछ भी नहीं होता यह स्त्री अच्छी तरह जानती है । वह कहती है, `तुम ऊबर भी तो नहीं जाते हो किसी चीज से, और हमें इससे सूझता ही नहीं, कि हम क्या अच्छा कर सकते हैं तुम्हारे लिए ।`[1] यहाँ पति-पत्नी के बीच की विवशता प्रकट हुई है । स्त्री भी दिनभर धक्के खाते-खाते स्कूल से बाजार, बाजार से स्कूल फिरते-फिरते परेशान होती है । इस तरह स्त्री अपनी तरफ से सदैव पूरी कोशिश करती रहती है, फिर भी पति ऊबता जाता है । यहाँ एक अनकही उदासी है, जो सही भी नहीं जाती और टली भी नहीं जाती । इस उदासी का कारण बताते हुए स्त्री कहती है, `तुम अपने को अलग कर ही नहीं पाते कभी ... लोगों से .... चीजों से ... जिन-जिन से तुम्हारा मन जुडा है, उन सब से ।` दुनिया में जीने का भी कुछ तरीका होता है । अपना सब कुछ किसी के पीछे खोकर जीने से खुद का अस्तित्व मिट जाता है । परेशानी होती रहती है । परंतु स्त्री में समझ होती है । वह कहती है, `तुम्हारा मन हमेशा उन चीजों के लिए भटकता है, जो तुमसे दूर है । पास होने पर चाहे तुम उन्हें देखो भी नहीं... पर उनका सेंक तुम्हें पहुँचता रहना चाहिए ।`[2] पहले जिस चीज से खुशी मिलती थी, अब नहीं मिलती । वह सिर्फ जीना है इसलिए जीती है, जिससे मेच्योरिटी आती है और मेच्योरिटी से जिन्दगी क्या है इसका पता लगता है । `पहले हम खुश रहते थे, आस-पास के लोग भी हमें खुश लगते थे । अब लगता है कि आस-पास के लोग भी दुःखी है, हम भी दुःखी है । और मेच्योरिटी क्या होती है ।`[3] वर्तमान काल में नारी की

---

१ अण्डे के छिलके अन्य एकांकी तथा बीज-नाटक - मोहन राकेश - पृ.१११

२ - वही - पृ.११२

३ - वही - पृ.११९

घर-बाहर खींचा-तानी हो रही है, उसे मानसिक समाधान नहीं मिल रहा है । इस बात को लेखक ने यहाँ स्पष्ट किया है ।

हं: ।

इस बीज नाटक में एक स्त्री पात्र है - ममा । इसमें पारिवारिक संघर्ष और टूटे,थके,हारे इन्सान की नियति को उजागर किया है । ममा का पति दो सालों से बीमार है। लडका लंदन में है, जो तीन सालों में एक बार भी नहीं आया है । लडकियाँ उसी शहर में होकर भी न होने के बराबर है । आर्थिक विवंचना और पति की बीमारी के कारण वह कुछ भी करने के लिए विवश है । अभी जीवन के उत्तरार्ध में अकेलापन और एकांतिक पीडा बढती जा रही है । आत्मीय सम्बन्ध टूटते जा रहे हैं । अंत में ममा कहती है, कि ` मुझसे अब नहीं होता, पपा ।` इससे स्पष्ट होता है, कि वह जीवन का बोझ ढोने के लिए असमर्थ है । रिश्तेदार है सिर्फ मजा देखने के लिए । मदद करने के लिए कोई भी नहीं । वह अकेली ही किसी तरह घर चला रही है । इस प्रकार की पारिवारिक समस्याओं के बीच छूटती नारी अपने सच्चे यथार्थ के कारण आज घर-घर में पाई जाती है । इस तरह आधुनिक जीवन में पैदा होनेवाले हर रोज के जीते जागते सवाल राकेश ने बडे मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किए हैं । इन सवालों का कारण केवल परिस्थिति है । मनुष्य के हाथ में केवल जूझते रहना,झोलते रहना ही बाकी रह जाता है । ममा अपने पति को सदैव सान्त्वना देती रहती है । ममा ` आधे - अधूरे ` की सावित्री की तरह घर के बोझ को स्वयं ढो रही है । सावित्री जैसी वितृष्णा, हताशा उसमें भी प्रस्फुटित हुई है । वह सावित्री की तरह परिस्थिति से जूझ रही है ।

रात बीतने तक तथा अन्य ध्वनि नाटक --

रात बीतने तक --

इसमें सुन्दरी,अलका और चंद्रिका आदि तीन नारी पात्र हैं । अलका सुंदरी

की दासी है । वह बुध्द के उपदेशों से प्रभावित है । सुंदरी उसे हर तरह से प्रवृत्ति की ओर खींचने का प्रयास करती है, फिर भी अलका पहले से ही अपार्थिव की ओर झुकी हुई दिखाई देती है ।

चंद्रिका एक नर्तकी है, जो कामोत्सव में रात बीतने तक नृत्य करने के लिए आई है । वह सुबह ही दीक्षा ग्रहण करनेवाली है और नृत्य कर थकी हुई है, अत: वह थोडा विश्राम करना चाहती है । परंतु वह रातभर नृत्य करने के लिए बिक चुकी है । इसलिए विवशता से नृत्य करती रहती है । वह कहती है, ' मेरा मन कह रहा है, कि मैं एक पहर आँखें मूँदकर चुपचाप बैठी रहूँ । प्रभात होनेपर आज मुझे दीक्षा ग्रहण करने के लिए जाना है । ... मेरी सात वर्षों की पुत्री सुचित्रा भी साथ दीक्षा ले रही है .... नर्तकी अपने पेट के शासन को मान कर चलती है, तो पर भिक्षुणी अपने हृदय के शासन को स्वीकार करती है ।.... परंतु मैं आपके दिए हुए मूल्य का दावा मानती हूँ । उस मूल्य से खरीदी हुई नर्तकी अवश्य नाचेगी । ... यह आदेश ? जाने किसका यह आदेश है ? परंतु इस आदेश का उल्लंघन नहीं हो सकता, राजकुमारी । इस आदेश से बडा और कोई आदेश नहीं है । धम्मं सरणं गच्छामि । बुध्दं सरणं गच्छामि । संघं सरणं गच्छामि ।'[१] यह कहते हुए वह चली जाती है । इससे यह स्पष्ट होता है, कि सुंदरी की मादकता तथा रूपगर्व का सभी पर का प्रभाव नष्ट होता जा रहा है ।

सुंदरी नन्द की पत्नी, नन्द को अपने मोह जाल में सदैव जकडकर रखना चाहती है । बुध्द के उपदेशों की अवहेलना और उपेक्षा करती है । लोगों पर अपना प्रभाव छोडने के लिए और बुध्द के प्रभाव का प्रतिकार करने के लिए सुंदरी कामोत्सव का आयोजन करती है । उसे अपने रूप यौवन पर गर्व है, जो उसकी अस्मिता का अंग बना हुआ है । वह रात के बीतने तक चंद्रिका के नृत्य का आयोजन करती है, परंतु बौध्द भिक्षुओं का समवेत स्वर सुनते ही उसका नृत्य शिथिल हो जाता है । नन्द भी बीच-बीच में उदास होता रहता है । नर्तकी तो नृत्य की असमर्थता व्यक्त कर स्वयं भिक्षु बनने की बात कह कर चली जाती है । तब सुंदरी के आदेश निरर्थक होकर

---

१ रात बीतने तक तथा अन्य ध्वनि नाटक - मोहन राकेश - पृ. १५-१६-१७

रह जाते है । इस समय सुंदरी के मन को गहरी चोट कचोटती है । अंत में जब नन्द भिक्षु बन कर सुंदरी के व्दार पर आ जाता है और सुंदरी को अपने रुप का गर्व भी भिक्षापात्र में डालने के लिए कहता है, तो सुंदरी बेहाल हो जाती है । ' तो सचमुच ... सचमुच ... आपने भी भिक्षु का वेश स्वीकार कर लिया । मैं .... मैं आज आपको भिक्षा दूंगी ? मैं आपको क्या भिक्षा दे सकूँगी ? .... मुझे कुछ नहीं सूझाता । मुझे सहारा दीजिए । मेरे कुछ समझ में नहीं आता ।'[१] अंत में सुंदरी अनिश्चित से स्वर के साथ भिक्षुओं के समवेत स्वर में अपना स्वर मिलाती है । धम्मं सरणं गच्छामि , बुध्द सरणं गच्छामि, संघं सरणं गच्छामि । इससे यह स्पष्ट होता है, कि सुंदरी के मन में पार्थिव-अपार्थिव का व्दंव्द उमड घुमड रहा था और अन्त में वह अनिश्चित रुप में क्यों न हो अपार्थिव की ओर झुक जाती है ।

सुबह से पहले --

इस ध्वनि-नाटक में एक ही नारी पात्र है लीला, जो प्रकाश की पत्नी और राज की भाँभी है । कथानक का प्रारंभ लीला के मानसिक आंदोलनों से ही होता है । ' ओह । आज राज ने कैसी मुसीबत में डाल दिया है... उसकी सूरत से यही लगता था जैसे वह कोई डाकू है । बढी हुई दाढी, लाल आँखें और बडे बडे रुखे बाल ...'[२] । इससे स्पष्ट होता है, कि लीला के मन में आयाचित महेंद्र के बारे में पहले से ही शक था । बस्ती से दूर इस घर में अकेलापन महसूस होने लगता है । उसे लगता है कि मेहेंद्र हलके कदमों से इधर-उधर चल रहा है और किसी चीज को घसीटकर ले जा रहा है । वह घबरा जाती है । अपने पति को बाहर जाने से रोकती है । महेंद्र कहता है कि उसे सुबह से पहले यहाँ से कहीं दूर जाना है । इसलिए वह वक्त पूछता है । तो लीला सोचती है, कि यदि वह जानेवाला ही है, तो गलत समय बताकर इस बला को टाल दिया जाए । इसलिए वह घडी को छिपाकर रखती

---

१ रात बीतने तक तथा अन्य ध्वनि नाटक - मोहन राकेश - पृ. २२

२ - वही - पृ. ५०

है और उसे गलत समय बता कर समय से बहुत पहले घर से बाहर निकाल देती है । और जब उसे समझाता है, कि राज एक क्रांतिकारी है, उसके पीछे पुलिस लगे हुए हैं और वह फरार होने वाला है, तब वह हक्का-बक्का रह जाती है । इस प्रकार लीला में नारी सुलभ भय की भावना अपने स्वाभाविक रूप में दिखाई देती है ।

कँवारी धरती --

इस ध्वनि नाटक में पाँच नारी पात्र हैं -- रजनी, सुभागी, लक्ष्मी, राधिका और चम्पा । रजनी राधाचरण की बेटी है । वह बैडमिंटन की खिलाडी है । सुभागी रजनी की माँ है । रजनी इस नाटक का केंद्रबिंदु है । माँ-बाप के पढे लिखे होने के कारण रजनी को काफी स्वतंत्रता मिलती है । वह कॉलेज की तरफ से बैडमिंटन टूर्नामेन्ट में खेलने के लिए जाती है । वहाँ उसकी विजय से भेंट होती है । विजय की कविता और नकली भावुकता के जाल में फँसकर रजनी अपने सर्वस्व का दान देती है । लेकिन विजय के यथार्थ से परिचित होने से वह पछताती है । वह अपने विश्वास की हत्या करनेवाले विजय का प्रतिकार कर सकती थी, लेकिन उन्होंने ऐसा नहीं किया क्योंकि भोलीभाली लक्ष्मी को देखकर उसके अंतस की नारी जाग उठी । "मैंने ऐसा किया तो एक हरिणी की तरह कोमल लडकी के विश्वास की हत्या होगी ।"[१] रजनी के विवाह की माँ-बाप को चिंता है । परंतु वह विवाह के लिए तैयार नहीं है । क्योंकि वह एक बच्चे की कँवारी माँ बननेवाली है, जिसका जिम्मेदार विजय है । माँ-बाप डॉक्टर की मदद से रजनी को अनचाहे मातृत्व से मुक्ति दिलाने की बात सोचते हैं । परंतु वह कहती है, "उस जीव के मोह में पडकर ही मैंने इस स्थिति में अब तक अपने प्राणों की रक्षा की है ।.... मैं भी उसका हित चाहती हूँ, पिताजी । उसके लिए अपना दिल छोटा नहीं करना चाहती । परिस्थितियों की क्रूरता उसका अपराध तो नहीं है । वह तो फिर भी मेरे तन मन का वैसा ही अंश है ....।"[२] रजनी घर छोडकर भाग जाती है,

---

१ रात बीतने तक तथा अन्य ध्वनि नाटक - मोहन राकेश - पृ. ७३

२ - वही - पृ. ७५

और हरिद्वार में विलोचन पंडा के यहाँ आश्रय लेती है, परंतु विलोचन की पत्नी को रजनी का यह कृत्य पाप लगता है और वह उसे घर से बाहर जाने के लिए कहती है । परंतु रजनी के कृत्य को पाप समझानेवाली राधिका को यह मालूम नहीं कि विलोचन की बहन चम्पा हररोज रात को गंगाजी की आरती का बहाना करके अपने शरीर का क्रय करने जाती है । वहीं चम्पा रजनी को उसी मार्ग पर जाने की सलाह देती है । चम्पा रजनी को उस आदमी के आश्रय में भेजना चाहती है, जो अपने शरीर का क्रय करनेवाली नारियों का ठेकेदार है । रजनी उसे अस्वीकार कर उस घर से बाहर चली जाती है और गंगाजी के तट पर आ जाती है । वहाँ लोग पानी की लहरों पर दीपक छोड रहे हैं । रजनी भी एक दीपक को जन्म देकर अपने प्राण रूपी दीपक को गंगाजी की लहरों पर छोड देती है । इस प्रकार रजनी भावना और यथार्थ के साथ संघर्ष करती रहती है । सुभागी, राधिका और लक्ष्मी परम्परावादी नारियाँ हैं । चम्पा छुपे वेश्या व्यवसाय करनेवाली नारियों की प्रतिनिधि है । तो रजनी स्वतंत्र और स्वच्छंद मनोवृत्तिकी नारी है, जो पशु प्रवृत्तिवाले पुरुषों के हाथ में पड कर तन-मन से हार कर अनचाहे मातृत्व से मुक्ति पाने की मानसिकता में अपने माँ-बाप की तथा अपनी इज्जत बचाने के लिए दर बदर हो जाया करती है ।

उसकी रोटी --

इस नाटक में दो नारी पात्र हैं -- बालो और जिन्दो । जिन्दो बालो की मुटियार बहन है, जिसे जंगी चाचा छेडता है । इसलिए वह बहुत डरी हुई है । बालो ड्राइवर सुच्चासिंह की पत्नी है । वह अपने पति को परमेश्वर मानती है । वह अपने पति को सर्वांत भाव से समर्पित हो गई है । पति की गालियों और अण्ट-सण्ट बातों की भी वह परवाह नहीं करती । वह पति के प्रति अनन्यभाव ही व्यक्त करती है । वह हररोज सर्दी-गर्मी, धूप-बरसात आदि किसी की भी बिना परवाह किए एक कोस चल कर पति के लिए बस अड्डे पर खाना लेकर जाती है । एक दिन जिन्दो के कारण उसे रोटी लेकर जाने के लिए देर होती है । उसे एक ओर जिन्दो की चिन्ता है तो दूसरी ओर पति की । सुच्चासिंह की बस वहाँ आकर चली जाती

हैं । फिर भी वह उसकी राह देखती हुई रात नौ बजे तक वहाँ रुकती है । सुच्चासिंह ने चमारिन रखी है, यह बात सुन कर वह कहती है, 'सब लोग उससे जलते हैं ।' जब मैं उसकी घरवाली होकर उसकी किसी बात का बुरा नहीं मानती तो और लोगों के क्यों कलेजे में तीर चुभते हैं । वह आप कमाता है, अपनी कमाई से जो जी चाहे करता है । लोगों को उससे मतलब ।[1] इससे स्पष्ट होता है, कि उसकी निष्ठा अडिग है । वह निडर है । वह घर की बातें बता कर पति को परेशान करना नहीं चाहती । क्योंकि सुच्चासिंह उसे बुरी बातें कहता है, पर दिल से कभी उसे बुरा नहीं समझाता । पति को रोटी तो मिली नहीं । बालो के ऊँघ नेका लाभ उठाकर एक आवारा कुत्ता रोटी खा गया फिर भी बालो ने जो अपना पन दिखाया, उससे पति पिघल गया । बालो के चरित्र के माध्यमसे लेखक ने यह बता दिया है, कि नारी और पुरुष में अपना पन की संवेदना बनी रहना ही वास्तविक जीवन है । इस तरह लेखक ने चिरंतन काल से चली आई पति-परमेश्वर वाली परम्परा को आधुनिक परिवेश में भी विद्यमान दिखाया है ।

दूध और दाँत --

इस ध्वनि-नाटक में प्रमुख रूप से दो नारी पात्र हैं -- राजकरनी और प्रकाशो, जो बाढग्रस्त परिस्थिति में फँसी हुई हैं । इसर चाचा के कहने पर वह अपने बच्चों को लेकर कहीं सहारा ढूँढने के लिए भाग जाती है । पाशो(प्रकाशो) रोटी का इन्तजाम करने के लिए कहीं चली जाती है । बच्चे भूख से व्याकुल हो जाते हैं । इतने में दर्शन नामक नरपशु राजकरनी के पास आकर संकटग्रस्त परिस्थिति का लाभ उठाने के लिए रोटी का लालच दिखाकर अपनी वासना की भूख मिटाना चाहता है । परंतु राजकरनी का मातृहृदय उसके रोटी के लालच के सामने झुकता नहीं, उसकी अपेक्षा वह मर जाना अच्छा समझाती है । और उसे ढुकरा देती है । उधर पाशो हवाई जहाज से आनेवाली रोटियों तक पहुँची भी नहीं । उसे कहीं से कुछ भी नहीं मिलता, वह निराश होकर खाली हाथ वापस

---

१ रात बीतने तक तथा अन्य बीज-नाटक - मोहन राकेश - पृ.९१

लौट रही थी कि रास्ते में दर्शन मिलता है । खुद की और बच्चों की भूख के कारण व्याकुल पाशो अपने शरीर का मूल्य देकर दर्शन से रोटियाँ लेती है । इधर दूध के लिए राजकरनी का छोटा बच्चा लाली दाँतों से राजकरनी के रूखे-सूखे स्तनों को नोच रहा है, जिसके घावों से घायल होकर अपने दिल पर पत्थर रखती है और लाली को बाढ में बह जाने के लिए छोड कर वहाँ से कहीं दूर रेल स्टेशन पर चली जाती है । परन्तु उसी रात में लाली को किसी दूसरी स्त्री के पास देखकर उसका मातृ-हृदय उमडकर आता है और मध्यरात्रि में लाली को उस स्त्री से चोरी छुपे उठा कर बाढ के पानी में ही अपने गाँव की ओर चल पडती है । अब तक बाढ का पानी भी उतरने लगता है । और लाली वापस मिलने से सब कुछ मिलने का आनंद राजकरनी को होता है । इससे यह स्पष्ट होता है कि संकटग्रस्त परिस्थिति में लोग सिर्फ अपने प्राण बचाने की कोशिश करते हैं । अपने शरीर का मूल्य बेच कर भी वे अपने प्राणों की रक्षा करते हैं । यहाँ तक कि अपने कोख से उत्पन्न बच्चों को भी परिस्थिति के हवाले छोड देते हैं । उसके साथ साथ राजकरनी का मातृहृदय, दृढ चरित्र पर अडिग रहना, पाशो का परिस्थिति के आगे झुकना आदि बातें भी स्पष्ट होती हैं ।

निष्कर्ष --

मोहन राकेश के एकांकी, बीज नाटक एवं ध्वनि नाटकों के नारी पात्र अपनी सारी विशेषताएँ लेकर अवतरित नहीं हुए हैं । आज परिवर्तित समाज अपने साथ सभी लोगों को समेटता जा रहा है, उसमें नारी का अलग अस्तित्व नजर नहीं आता है । आत्मीय सम्बन्ध और रिश्ते-नाते यथार्थ से टकरा कर टूट रहे हैं । सम्बन्धों की केवल विडम्बनाएँ शेष बची हुई है । नारी निराश और दोहरी मन:स्थिति में जी रही है । वीना जैसी नारी आधुनिक बनना चाहती है परंतु बाकी लोग उसके मार्ग में बाधा बनकर रह जाते हैं । जब माधुरी जैसी नारियाँ झूठी प्रतिष्ठा के पीछे पडने के लिए विवश हो जाती हैं, तो नारी की

दयालुता पर प्रश्न चिन्ह लग जाता है । 'शायद' की स्त्री और 'है' ,की ममा मात्र रनखा यथार्थ भोगने के लिए विवश है । केवल जीते रहना ही उनकी नियति बनी हुई है, क्योंकि उनके सामने कोई ठोस मूल्य रहे ही नहीं हैं । पति-पत्नी और ममा-पपा के स्तर पर निराशा और अलगाव प्रभावी दिखाई देता है । अपने हृदय में असीम ममता लेकर 'सिपाही की माँ' बदलते यथार्थ में दर-दर की ठोकरें खा रही है । माँ की युगों-युगों की आर्थिक रूप में दबी मानसिकता केवल कल की आशा पर जीने के लिए विवश है । 'शायद', 'और' 'है', बीज नाटकों की नारी संभलने का प्रयत्न तो करती है, परंतु अंतस् में टूटी, निराश, पराजित और अकेली भी है । 'रात बीतने तक' की सुंदरी रूप यौवन और वैभव के दर्प से लथपथ है । सुंदरी जैसी उच्च कुल की नारियाँ पुरुषा को अपने मोह-जाल में बाँध कर अपनी मुट्ठी में रखना चाहती हैं । अलका और चन्द्रिका जैसी नारी पेट भरने के लिए अपने मालिक के इशारों पर नाचने के लिए विवश हैं । 'सुबह से पहले' की लीला एक सामान्य संवेदनशील नारी के रूप में चित्रित की गई है । 'कँवारी धरती' की सुभागी एक परम्परागत नारी है । तो रजनी जैसी पढी-लिखी, स्वच्छंद नारी विजय जैसे पशु वृत्तिवाले पुरुषा के हाथ में पडकर तन-मन से हार कर अनचाहे मातृत्व से मुक्ति पाने की मानसिकता में अपने माँ बाप की तथा स्वयं की इज्जत बचाने के लिए दर-बदर हो जाया करती है । लक्ष्मी और राधिका परम्परावादी नारियाँ हैं । उच्च कुल में उत्पन्न होकर भी चम्पा जैसे चोरी छुपे वेश्या व्यवसाय करनेवाली नारियाँ भी समाज में कम नहीं हैं । आज के आधुनिक परिवेश में भी चिरन्तन काल से चली आई परम्परा के अनुसार पति को परमेश्वर माननेवाली 'उसकी रोटी' की बालो जैसी नारियाँ भी विद्यमान हैं । 'दूध और दाँत' की अपनी निष्ठा और आस्था पर अडिग ,परम्परावादी राजकरनी जैसी और परिस्थिति से विवश होकर रोटी के लालच में शरीर बेचनेवाली नारी भी आज समाज में दिखाई देती है । इस प्रकार राकेश के एकांकी साहित्य में जहाँ- कहीं परम्परावादी तो कहीं आधुनिक नारी दिखाई देती है, वहाँ परिस्थिति से विवश नारी की विडम्बना भी दृष्टिगोचर होती है ।

••